संस्कृत - वाङ्मय
में
नेहरू

संस्कृत-वाङ्मय में नेहरू

ईस्टर्न बुक लिंकर्स

५।१६, विजयनगर (डबल स्टोरी), दिल्ली-११०००६

प्रथम संस्करण : जनवरी १६७७

मूल्य : रु० १५.००

मुद्रक:—

अमर प्रिंटिंग प्रेस, (श्याम प्रिंटिंग एजेन्सी),

८।२५, विजयनगर (डबल स्टोरी), दिल्ली-११०००६

स्वतन्त्रता सेनानी

संस्कृत भाषा व व्याकरण के प्रकाण्ड पण्डित

मेरे श्राद्य गुरु व पिता

स्व० पं० वासुदेव जी विद्यालंकार

को

सादर समर्पित

प्रो० रसिक विहारी जोशी
अध्यक्ष संस्कृत-विभाग
दिल्ली-विश्वविद्यालय

मैंने कुमारी मधुबाला द्वारा लिखित 'संस्कृत-वाङ्मय में नेहरू', पुस्तक यत्र-तत्र पढ़ी। इसमें पं० जवाहरलाल नेहरू पर संस्कृत भाषा के माध्यम से लिखी हुई गद्यपद्यमयी सामग्री का सानुवाद संकलन किया गया है। संस्कृत-विभाग की शोध-परिषद्‌ द्वारा आयोजित निबन्ध-प्रतियोगिता में इस पर गत वर्ष प्रथम पुरस्कार प्रदान किया गया था। मैं कुमारी मधुबाला के परिश्रम का स्वागत करता हूँ और आशा करता हूँ कि भविष्य में आधुनिक संस्कृत-साहित्य के क्षेत्र में यह अपना बहुमूल्य योगदान प्रदान करती रहेंगी। कुमारी मधुबाला की शोध में रुचि और ज्ञान-वृद्धि के लिए मैं शुभाशीष् देता हूँ।

डॉ० कृष्ण लाल
रीडर, संस्कृत-विभाग
दिल्ली-विश्वविद्यालय

कुमारी मधुबाला का ग्रन्थ 'संस्कृत-वाङ्मय में नेहरू' निबन्ध से पुस्तक के जन्म का विरला उदाहरण है। दिल्ली-विश्वविद्यालय की इस प्रतिभासम्पन्न, परिश्रमी और संस्कृत-संस्कृति-निष्ठ शोधछात्रा ने अथक धैर्य और उद्यम से आधुनिक संस्कृत-साहित्य से सम्बद्ध इस कठिन विषय पर अल्पकाल में ही यह अनुपम ग्रन्थ तैयार किया है। निस्सन्देह इस पर संस्कृत-प्रेमियों और संस्कृतज्ञों को गर्व होगा। सर्व-प्रमुख कठिनाई आधार-ग्रन्थों को प्राप्त करने की थी। सभी पुस्तकें एकत्र उपलब्ध नहीं थी। कुमारी मधु ने इधर-उधर दौड़धूप करके पुस्तकें प्राप्त कीं और वह नेहरू-विषयक संस्कृत ग्रन्थ पर्याप्त मात्रा में प्राप्त करने में सफल हुई। सम्भव है इस विपुल भूभाग पर अब भी कुछ ग्रन्थ अप्राप्त रह गये हों। इनमें से अधिकांश ग्रन्थों के अनुवाद अथवा भाष्य उपलब्ध नहीं हैं। कुमारी मधु ने स्वयं उन ग्रन्थों को मनोयोग से पढ़ा, समझा—उनके दोष तथा त्रुटियों को भी पहचाना। परिणामस्वरूप "प्रस्तुत पुस्तक आधुनिक-वैज्ञानिक आलोचनात्मक सुव्यवस्थित शैली में लिखा गया नेहरूविषयक संस्कृत-वाङ्मय से सम्बद्ध एकमात्र साङ्गोपाङ्ग विवेचन है" यह कहना अत्युक्ति नहीं होगी। आलोच्य साहित्य के कला, भाव और इतिहास पक्षों का इसमें पूर्ण सोदाहरण विश्लेषण किया गया है। इससे कुमारी मधु के इतिहास-ज्ञान का परिचय भी प्राप्त होता है। संस्कृत उदाहरणों के अनुवाद साथ होने के कारण पुस्तक सर्वग्राह्य हो गई है। पुस्तक के अन्त में उद्धृत पद्यों की वर्णानुक्रमणी शोध के लिये अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है। मेरा आशीर्वाद है और मुझे पूर्ण विश्वास है कि कुमारी मधु की यह प्रथम पुस्तक उसे एक प्रतिभासम्पन्न आलोचक लेखिका के रूप में प्रतिष्ठित करेगी। संस्कृत के क्षेत्र में आधुनिक साहित्य से सम्बद्ध यह एक अनुपम-ग्रन्थ सिद्ध होगा।

विषय-सूची

भूमिका

प्रस्तुत पुस्तक शोध-परिषद् (संस्कृत-विभाग, दिल्ली-विश्वविद्यालय) द्वारा 'नेहरूविषयकं संस्कृतवाङ्मयम् : ग्रन्थरूपेण प्रकाशितम्,' विषय पर आयोजित निबन्ध-प्रतियोगिता में लिखे निबन्ध का परिवर्द्धित रूप है ।[1] किन्तु प्रतियोगिता में शब्दों की निश्चित परिधि मेरे सम्मुख एक समस्या बन गई, क्योंकि इस विषय पर अनन्त सामग्री उपलब्ध थी, अतः मैंने निबन्ध तो शब्दों की सीमा का ध्यान रखते हुये लिखा किन्तु उस संगृहीत समस्त सामग्री को पश्चात् इस पुस्तक का रूप दिया ।

पं० जवाहरलाल नेहरू युग पुरुष हैं। युग के प्रत्येक क्षेत्र को उन्होंने प्रभावित किया है। प्रत्येक भाषा के लेखक व कवियों ने उनके व्यक्तित्व के विविध पक्षों से आकृष्ट होकर उनके अनेक चित्र अंकित किये हैं। संस्कृत के कवि और लेखक ने भी उनसे प्रभावित होकर अपने उद्गारों को व्यक्त किया है। संस्कृत के कवि ने महाकाव्य, खण्डकाव्य, नाटक, चम्पू, गद्य सभी विधाओं में उनका वर्णन किया है, जिससे उनके व्यक्तित्व और प्रभाव का महत्त्व प्रतिपादित होता है ।

जो लोग यह समझते हैं कि संस्कृत एक मृत भाषा है, उसमें नवीन साहित्य की रचना का अभाव है, उनकी भ्रान्ति इस अध्ययन से निर्मूल हो जायेगी। प्रस्तुत अध्ययन से यह स्पष्ट है कि संस्कृत का रचनाकार अत्यन्त जागरूक है, वह न केवल नवीन व युगानुसार विषयों से प्रभावित होकर उन पर वर्णनात्मक रचना करता है, वरन् युग के उस प्रश्न व व्यक्ति के सम्बन्ध में उसकी अपनी प्रतिक्रिया भी व्यक्त होती है। वह अपनी विवेक शक्ति से प्रस्तुत विषय पर अपनी धारणा भी व्यक्त करता है। अपनी कल्पना शक्ति से उस स्थूल विषय को सरस व हृदयग्राही बनाता है। उसकी भाषा व शैली में वह अद्भुत शक्ति है, जिसमें वह नवीन से नवीन विषय को अत्यन्त सौन्दर्य व चमत्कारपूर्ण ढंग से प्रकट करता है। अपने नए विषयों को स्पष्ट करने के लिए विविध भाषाओं के शब्दों को संस्कृत व्याकरण के अनुसार परिवर्तित कर उसने संस्कृत का शब्द-भण्डार बढ़ाया है ।

प्रस्तुत पुस्तक में पाँच अध्याय हैं। प्रथम अध्याय में संस्कृत में उपलब्ध

---

१. यह लिखना अप्रासङ्गिक न होगा कि उक्त प्रतियोगिता में मुझे प्रथम पुरस्कार तथा डॉ० सत्यव्रतशास्त्रि-स्वर्ण-पदक प्राप्त हुआ था ।

नेहरू-सम्बन्धी वाङ्मय का संक्षिप्त परिचय है । द्वितीय अध्याय में नेहरू कालीन स्वतन्त्रता से पूर्व व बाद की घटनाओं के वर्णन के साथ विश्व-इतिहास की कुछ प्रमुख घटनाओं का भी उल्लेख है। तृतीय अध्याय में चरित्र-नायक नेहरू के व्यक्तित्व व विशेषताओं के विविध पक्ष हैं। चतुर्थ अध्याय में नेहरू-विषयक संस्कृत-काव्यों का भावपक्ष व कलापक्ष की दृष्टि से विवेचन है। इस विवेचन से स्पष्ट है कि नेहरू पर लिखे काव्य काव्यात्मक दृष्टि से अत्यन्त रमणीय हैं। पंचम अध्याय उपसंहार है, जिसमें प्रस्तुत अध्ययन का महत्त्व प्रतिपादित कर मूल्यांकन किया गया है ।

सच तो यह है कि नेहरू का व्यक्तित्व स्वयं एक काव्य था। इनके जीवन की महान् घटनाएँ, उनके भावुक हृदय व उच्चादर्शों का वर्णन अपने आप में कविता बन जाते हैं ।

मेरी यह प्रथम कृति प्रकाशित हो रही है, अतः इसके प्रकाशन के अवसर पर मेरी इच्छा उन सबको धन्यवाद करने की हो रही है जिन्होंने मुझे जीवन में कुछ भी सिखाया है । संस्कृत के सुप्रसिद्ध विद्वान् प्रो० डॉ० सत्यव्रत (दिल्ली-विश्वविद्यालय, संस्कृत-विभाग) की विद्वत्ता का लाभ मैंने कक्षा में बैठकर उठाया है। उनकी अध्ययन व अध्यवसाय की वृत्ति मेरे लिए सदा प्रेरक रही है। इस पुस्तक की सम्मति लिखने के लिए मैं डाँ० सत्यव्रत की अत्यन्त आभारी हूँ।

मेरे शोध निर्देशक गुरुवर डॉ० कृष्णलाल (रीडर, संस्कृत-विभाग, दिल्ली-विश्वविद्यालय) की आज्ञा से मैंने पहले उक्त निबन्ध-प्रतियोगिता में भाग लिया और बाद में उनकी प्रेरणा से उसे पुस्तक-रूप दिया, उनकी प्रेरणा व सहायता के बिना मैं इस पुस्तक को इस रूप में प्रस्तुत न कर पाती। न केवल मुझे अपितु इनके सम्पर्क में आने वाले प्रत्येक विद्यार्थी को कुछ न कुछ लिखते रहने की प्रेरणा एवं सहायता इनसे मिलती रहती है। प्रस्तुत पुस्तक की सम्मति लिखने के लिए मैं इनके प्रति अपना आभार व्यक्त करती हूँ।

सम्प्रति संस्कृत-विभाग, दिल्ली-विश्वविद्यालय के अध्यक्ष डॉ० रसिक विहारी जोशी के सौजन्यपूर्ण व्यवहार ने विद्यार्थियों में आत्मविश्वास पैदा किया है। इस पुस्तक की सम्मति लिखने के लिए मैं डॉ० जोशी की अत्यन्त कृतज्ञ हूँ।

मैंने संस्कृत विषय लेकर बी० ए० आनर्स व एम० ए० की परीक्षाएं मिराण्डा हाउस, दिल्ली-विश्वविद्यालय से उत्तीर्ण की हैं । वहाँ की अध्यापिकाओं से कुछ पढ़कर ही मैं कुछ लिखने योग्य बनी हूँ। सरलता की प्रतिमूर्ति श्रीमती रत्नमयी देवी दीक्षित के स्नेह एवं ममत्व ने मुझे सदा ही अध्ययन की प्रेरणा दी है । उनके सेवानिवृत्त होने के उपरान्त भी

मुझे उनसे सदा प्रेरणा मिलती रही है। मुझसे अब भी उनका वही पुराना स्नेह है। मैं उनका धन्यवाद करती हूँ।

श्रीलालबहादुरशास्त्रीकेन्द्रीयसंस्कृतविद्यापीठ के प्राचार्य डॉ० मण्डन मिश्र की भी मैं अत्यन्त आभारी हूँ जिनकी शुभकामनाएं एवं सहयोग मुझे सदैव प्राप्त रहे हैं।

वेदाचार्य परीक्षा उत्तीर्ण करते हुए मैंने पं० शिवदास मिश्र एवं श्री उपेन्द्र जी से जो ज्ञान प्राप्त किया उसके लिए मैं उनका भी सम्मानपूर्वक स्मरण करती हूँ। पं० श्री शिवदास जी का विद्यार्थियों के प्रति स्नेहपूर्ण व्यवहार किसी भी विद्यार्थी को श्रद्धानत करने में समर्थ है।

मुझे इस पुस्तक के लिखने में डॉ० श्यामबहादुर वर्मा (हिन्दी प्राध्यापक, पी. जी. डी. ए. वी. कॉलेज, दिल्ली-विश्वविद्यालय) का सक्रिय सहयोग मिला है। सदैव अध्ययन रत डॉ० श्यामबहादुर वर्मा ने अत्यन्त व्यस्त जीवन होने पर भी मुझे जो अपना अमूल्य समय दिया उसका भार धन्यवाद के शब्दों से कथमपि नहीं चुकाया जा सकता।

अपनी इस प्रथम कृति के प्रकाशन के शुभावसर पर मैं अपने दिवंगत पिता पं० वासुदेव जी विद्यालंकार (अध्यापक, गुरुकुल-कांगड़ी) का नाम आदरपूर्वक स्मरण करती हूँ, जो स्वयं संस्कृत भाषा के प्रकाण्ड पण्डित थे, और जिन्होंने मुझे संस्कृत भाषा की सर्वप्रथम शिक्षा भी दी। यदि वे आज होते तो मेरी इस कृति को देखकर अपूर्व प्रसन्नता का अनुभव करते। आज वे नहीं हैं, तो भी मुझे लगता है कि अब भी उनका आशीर्वाद मेरा पाथेय है।

पूज्या माता श्रीमती सीतादेवी जी से मैंने कर्मठता का पाठ पढ़ा है। मान्या बहिन श्रीमती विनीता ने मुझे जीवन के हर क्षेत्र में अंगुली पकड़-पकड़ कर आगे बढ़ना सिखाया है। बड़े भाई डॉ० प्रशान्त कुमार वेदालंकार (हिन्दी-प्राध्यापक, हंसराज-कॉलिज, दिल्ली-विश्वविद्यालय) मेरी प्रत्येक प्रेरणा के स्रोत रहे हैं, उनके निर्देशन व प्रोत्साहन से मुझमें आत्मविश्वास उत्पन्न हुआ है। वस्तुतः उन्होंने मुझे कभी पिता की अनुपस्थिति का आभास नहीं होने दिया। प्रस्तुत पुस्तक की रचना में भी उन्होंने मुझे अनेक उपयोगी परामर्श दिए हैं।

मेरे दूसरे भाई डॉ० प्रह्लाद कुमार (संस्कृत-प्राध्यापक, पी. जी. डी. ए. वी. कॉलिज, दिल्ली-विश्वविद्यालय) की एक ओर मैं शिष्या रही हूँ, दूसरी ओर भाई-बहिनों में तीसरे नं. पर वे हैं, चौथे पर सबसे छोटी मैं हूँ अतः उनसे साधिकार और कभी-कभी लड़ कर भी सहायता ले लेती हूँ।

मेरी भाभियाँ श्रीमती सरोज कुमारी दीक्षा विद्यालंकार (संस्कृत-प्राध्यापिका, श्यामाप्रसाद मुखर्जी कॉलिज, दिल्ली-विश्वविद्यालय) व श्रीमती सुमेधा

(हिन्दी-प्राध्यापिका भारती-महिला कॉलिज दिल्ली-विश्वविद्यालय) ने भी मुझे सदा प्रोत्साहित किया है।

अपने ही परिवार के सब सदस्यों का नामोल्लेख किसी पाठक को विचित्र लग सकता है, वह इसे आत्मरति व परिवार-रति की संज्ञा दे सकता है, पर घर में सबसे छोटी होने के कारण मुझे इन सबसे सभी प्रकार की सहायता मिलती रहती है, अतः इस प्रथम कृति के प्रकाशन के अवसर पर बिना इनके नामोल्लेख के मुझे अपूर्णता ही लगती रहती। वस्तुतः इन सबके नामोल्लेख से मैं स्वयं को गौरवान्वित अनुभव करती हूँ।

मैं अपने चार वर्षीय भतीजे प्रिय विराट् दिव्यकीर्ति (दिवि) का भी धन्यवाद करती हूँ, जिसने अत्यन्त चञ्चल होने पर भी पुस्तक लिखने के समय मेरे पास बैठकर—"बुआ तुझे तंग नहीं करूंगा, बस देखता रहूँगा", कहकर धैर्य का परिचय दिया एवं पानी, स्याही आदि दौड़-दौड़ कर लाकर देने में सहयोग भी दिया।

मैं अपनी उन सभी शोध-कार्य में रत सखियों का भी धन्यवाद करती हूँ जिनकी सद्भावना मुझे सदा प्राप्त रही है।

मैं दिल्ली-विश्वविद्यालय के पुस्तकालय एवं वहाँ के कर्मचारियों विशेष रूप से श्री शशि-भूषण गुप्ता, श्री जंगबहादुर खन्ना, श्रीकल्याण सिंह जी एवं सुश्री शान्ता की अत्यन्त आभारी हूँ जिन्होंने मुझे पुस्तकें प्राप्त करवाने में हर सम्भव सहायता की।

मैं नेहरू संग्रहालय (तीन-मूर्ति) के पुस्तकालय तथा वहाँ के कर्मचारियों का धन्यवाद करती हूँ, जिन्होंने मुझे संस्कृत भाषा में लिखे समस्त नेहरू-वाङ्मय को सुलभ कर दिया। वहाँ के कर्मचारियों का सहयोग स्मरणीय है।

अन्त में मैं इस पुस्तक के प्रकाशक, ईस्टर्न बुक लिंकर्स के स्वामी श्री शाम लाल जी के प्रति भी अपना आभार व्यक्त करती हूँ जिनका परिश्रम प्रत्येक व्यक्ति के लिए उदाहरण बन सकता है। न केवल शाम लाल जी अपितु इनका पूरा ही परिवार सदैव कार्यरत रहता है।

अन्त में मेरा पाठकों से निवेदन है कि वे मेरी त्रुटियों से मुझे अवगत कराने की कृपा करें।

मधु बाला
शोध-छात्रा
संस्कृत-विभाग
दिल्ली-विश्वविद्यालय

१

संस्कृत-वाङ्मय में नेहरू

समष्टि को समर्पित समुन्नत व्यष्टि को ही महापुरुष कहा जाता है। महापुरुषों के चरित्र, उनकी वाणी इत्यादि के आलोक में अगणित समसामयिक मानव अपना जीवनपथ पा लेते हैं और वही आलोक युग-युग तक मानवता का पथ प्रशस्त करता रहे इसका दायित्व साहित्यकार एवं वाङ्मय का होता है।

भारतीय संस्कृति के संदेश को संजोने वाले, परिष्कृत, सुसंस्कृत, तथा दिव्य संस्कृत वाङ्मय के महान् रचयिताओं ने इसी लक्ष्य को ध्यान में रखकर महापुरुषों के चरित्रों को लोकसामान्य तक पहुँचाने के लिए रामायण, महाभारत, रघुवंश सदृश ग्रन्थों की समय-समय पर रचना की थी। आधुनिक काल में भी भारत को पारतन्त्र्य से मुक्त करने के लिए स्वातन्त्र्य-संघर्ष के महान् सेनानियों—लोकमान्य तिलक, सुभाषचन्द्र बोस, महात्मा गांधी इत्यादि के चरित्रों ने भारतीय जनमानस को अत्यधिक आन्दोलित किया और इसी लिए भारतीय वाङ्मय में उनका विविध प्रकार से स्तवन भी किया गया। इन श्रेष्ठ महापुरुषों में एक नाम असाधारण महत्त्व का है—वह नाम है पं० जवाहरलाल नेहरू।

पं० नेहरू का वैशिष्ट्य

ऐश्वर्य सम्पन्न परिवार में जन्म लेकर भी उन्होंने स्वेच्छा से राष्ट्रार्थ त्यागमय जीवन अपनाया। परतन्त्र भारत में उन्होंने राष्ट्रीय महासभा का नेतृत्व किया। स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रधान मन्त्री के रूप में सत्रह-अठारह वर्ष तक राष्ट्र का नेतृत्व किया और विश्व नागरिक के रूप में असाधारण प्रसिद्धि पाई। वे सफल राजनीतिज्ञ, कुशल प्रशासक, सहृदय साहित्यकार, अद्वितीय लोकनेता, महान् चिन्तक, अनन्य शान्तिदूत इत्यादि के रूप में ही नहीं, एक श्रेष्ठ पुत्र, प्रेमी पति, आदर्श-पिता, सरस मित्र एवं बच्चों के 'चाचा' इत्यादि के रूप में भी अपनी गहरी छाप विश्व मानस पर अंकित

कर गए। ७५ वर्ष की दीर्घ आयु में भी युवा सदृश स्फूर्ति से ओत-प्रोत महामहिम की मृत्यु पर सम्पूर्ण भारत ही नहीं, विश्व भी स्तब्ध रह गया था। उनके उसी पुण्य चरित्र को भारतीय साहित्यकारों ने 'हम तुम्हें मरने न देंगे'[1] की भावना से वाणी का अमर रूप दिया।

नेहरूपरक ग्रन्थ : कालक्रम और परिचय

संस्कृत के अनेक यशस्वी साहित्यकारों द्वारा समय-समय पर पं० नेहरू विषयक विविध लेखों, कविताओं आदि के रूप में रचित सामग्री बहुत विविधतापूर्ण, रोचक, अनुशीलनयोग्य तथा विपुल किन्तु विकीर्ण है। ग्रन्थरूपेण प्रकाशित सुन्दर कृतियों में (बालसाहित्य के अन्तर्गत आने वाली 'बालकानां जवाहरः' के अतिरिक्त) 'श्रीजवाहर-वसन्तसाम्राज्यम्' (१९५०), 'जवाहर-तरंगिणी' (१९५८), 'श्रीगान्धिबान्धवम्' (१९५९), 'श्रीशान्तिदूतः' (१९६३), 'अन्तिमयात्रा' (१९६४), 'नेहरुसूत्राणि' (१९६४), 'गीतजवाहरम्' (१९६५), 'जवाहर-चिन्तनम्' (१९६६), 'जवाहरजीवनम्' (१९६६), 'श्रीजवाहरलालनेहरुविजयनाटकम्' (१९६८) 'श्रीनेहरूचरितम्' (१९६९), 'नेहरूयशः सौरभम्' (१९७५) महत्त्वपूर्ण हैं। इस कालक्रमतः नामावलि से यह स्पष्ट है कि संस्कृत के साहित्यकारों की लेखनी का जो प्रवाह १९५० ई० से नेहरू चरित्र की ओर मुड़ा वह सामयिक आवेग का परिणाम नहीं था अपितु उसमें अद्यावधि सतत प्रवाह है।

श्रीजवाहर-वसन्तसाम्राज्यम्

रोहतक जिले के गोक्षी ग्राम निवासी पं० जयराम शास्त्री साहित्याचार्य की कृति 'श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्यम्'[2] सात सर्गों में विभाजित चार सौ श्लोकों का अलंकृत **महाकाव्य है**। क्रमानुसार इसके सर्ग हैं—वसन्तागम, वृक्षावलि-वर्णन, करीर-वर्णन, मलयानिल-वर्णन, भ्रमरीगान-वर्णन, प्रेमालाप-वर्णन तथा अन्य द्वीपरमणी-वर्णन। इस कृति में पं० जवाहरलाल नेहरू के अतिरिक्त अनेक राष्ट्रीय नेताओं—सरदार वल्लभ भाई पटेल, डा० राजेन्द्र प्रसाद, चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य इत्यादि का महात्मा गांधी रूपी वसन्त के अंगरूप में अत्यन्त अलंकृत शैली में स्तवन किया गया है। स्वतन्त्र भारत के प्रतिदिन को वसन्तोत्सव मानते हुए कवि ने शासक जवाहर के जीवन से सम्बद्ध कर काव्य का नामकरण 'श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्यम्' किया है।

---

१. हिन्दी के प्रसिद्ध गीतकार 'नीरज' की प्रसिद्ध रचना का शीर्षक।
२. मुद्रक—अर्जुन प्रेस, श्रद्धानन्द बाजार।

जवाहरतरंगिणी

श्रीधर वर्णेकर द्वारा रचित 'जवाहरतरंगिणी'[1] में कुल १०२ श्लोक हैं। यह 'भारतरत्न' जवाहरलाल जी पर लिखा गया एक प्रशस्तिग्रन्थ है। संस्कृत के प्रसिद्ध गंगालहरी सदृश ग्रन्थों की परम्परा में स्तुति-पद्यों का यह एक अभिनव शतक है। रचयिता ने स्वयं इसे 'अभिनवराजतरंगिणी' कहा है।[2] इस कृति में कवि ने पण्डित नेहरू के गुणों को अपने श्लोकों का विषय बनाया है। कहीं-कहीं कुछ घटनाओं का उल्लेख भी हुआ है।

श्रीगांधिबान्धवम्

'श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्यम्' के प्रणेता पं० जयराम शास्त्री की द्वितीय रचना 'श्रीगान्धिबान्धवम्'[3] २२ सर्गों का सरस महाकाव्य है। इसका दशम सर्ग श्रीनेहरूप्रशस्तिपरक है। इस सर्ग में नेहरू-परिवार के वर्णन के अतिरिक्त प्रधानमंत्री नेहरू जी द्वारा स्वतन्त्र भारत में किए गए विविध निर्माण कार्यों जैसे—नगरों, पथों, विशाल भवनों, वनों-उपवनों इत्यादि की नव-रचना के सुन्दर व यथार्थ वर्णन के साथ विदेशी महापुरुषों का आगमन व उनका स्वागत, दलाईलामा का भारत-प्रवेश, केरल के भंग मंत्रिमंडल, चीन का भारतीय सीमा उल्लंघन, कम्युनिस्टों का उपद्रव एवं अमेरिका के महापौरों के शिष्ट मंडल का भारत आगमन आदि समसामयिक महत्त्वपूर्ण घटनाओं का भी वर्णन किया है। गुण, रीति, रस, अलंकार आदि से यह काव्य परिपूर्ण है।

शान्तिदूतः

श्री ज्वालापतिलिङ्गशास्त्रिप्रणीत 'श्रीशान्तिदूतः'[4] एक लघु काव्य है। श्री नेहरू पर रचित इस रचना में ७६ श्लोकों वाले दो सर्ग हैं। प्रथम सर्ग में भारत की परतन्त्रता का वर्णन है और द्वितीय सर्ग में नेहरू जी के स्वप्नों के भारत का चित्रण है।

---

१. नागपुर से प्रकाशित, प्राप्ति स्थान—वागीश्वरी-निकेतन, धनतेली, नागपुर-१।

२. स्वर्गापगाम्बुज-पवित्र-मधुव्रतानां
स्वातीपयोधर-पयःकण-चातकानाम्।
गीर्वाण-वागुदधिमौक्तिक-हंसकानां
भूयान्मुदेऽभिनवराजतरङ्गिणीयम्॥

३. सुरेन्द्र प्रिंटर्स प्राइवेट लि०, डिप्टीगंज, दिल्ली में मुद्रित।

४. दि ओरियंट पवर् प्रेस, तेनाली।

अन्तिमयात्रा

श्री बी० एन० दातार की काव्य-कृति 'अन्तिमयात्रा' पं० नेहरू की शव-यात्रा से सम्बन्धित है। कवि को यह प्रतीत हुआ कि दिल्ली नगर में शवयात्रा के मार्ग में जो जो स्थान पड़े वे प्रतीकात्मक हैं और उनसे पं० नेहरू के जीवन, सिद्धान्त और कार्य के विविध पक्षों पर प्रकाश पड़ सकता है। अतः इसी विषय पर काव्य की रचना की गई है।

नेहरूसूत्राणि

डा० कृष्णदत्त भारद्वाज द्वारा रचित 'नेहरूसूत्राणि'[1] नामक ग्रन्थ संस्कृत की प्रसिद्ध सूत्र-शैली में रचित एक विलक्षण प्रयास है। इसमें ७५ सूत्र हैं जिनमें श्रीनेहरू के जीवन की प्रमुख घटनाओं का संकेत है। सम्पूर्ण कृति चार अध्यायों में विभक्त है—जीवनाध्याय, साधनाध्याय, प्रधानाध्याय एवं दर्शनाध्याय। अत्यन्त सरल शैली ['प्रयागे जन्म जीवनम्', 'माता-पितरौ महान्तौ'] में लिखे गये ये सूत्र नेहरू के सम्पूर्ण जीवन एवं विचार-दर्शन का एक चित्र-सा खींच देते हैं।

गीतजवाहरम्

श्रीरामकिशोर मिश्र द्वारा रचित 'गीतजवाहरम्'[2] नामक यह लघु गीतिकाव्य नेहरू जी की मृत्यु पर उनके विलाप में लिखा गया है। इस काव्य को कवि ने—"वन्दे महापुरुष ! ते चरणारविन्दम्, मया त्वमत्र कदापि न दृष्टः, साहित्यकार ! तव पाद-युगं नमामि, नमामि तमहं नृपनीतिकारम्, एहि जवाहर ! यशः प्रसारय, त्यज हि चिरनिद्रां द्रुतमिमाम्, एहि शान्तेर्दूत ! एहि, त्वां वयं संस्मरामः, वीर ! सदा त्वं सुपथमयासीः, कुरु विभामिह भूसुर-भारवे ! अयि सुप्तसमुद्र ! जागृहि, जन-सौहार्दमहं वाञ्छामि जवाहरलालस्य मनःकामना, एवं गतः क्व हा ! भारत-भास्करो महान्"—इन शीर्षकों में, विभाजित किया है। अत्यन्त सरल शैली में कवि ने नेहरू जैसे महान् नेता के दिवङ्गत होने पर दुःख प्रकट किया है। उनके विलाप से इसका अनुमान सहज ही लगाया जा सकता है कि भारतवासियों के लिए नेहरू जैसे मूर्धन्य

---

१. आर्य बुक डिपो, करौल बाग, दिल्ली से प्रकाशित।

२. ग्रामोदय प्रिंटिंग प्रेस, आर्यनगर, पो० मीरपुर खास जि० (अलीगढ़) से प्रकाशित।

विद्वान्, साहित्यकार, राजनीतिज्ञ एवं जननायक का खोना कितना खेदप्रद है।

जवाहर-चिन्तनम्

श्री वेलणकर द्वारा रचित 'जवाहर-चिन्तनम्'[१] नामक ग्रन्थ 'पूर्व-जवाहर' एवं 'उत्तर-जवाहर' इन दो भागों में विभक्त है। 'पूर्व-जवाहर' में प्रधान रूप से नेहरू के जीवन की प्रमुख घटनाएं एवं गौण रूप से विशेष अवसरों पर प्रकट किए गए उनके विचार गीत रूप में निबद्ध हैं। 'उत्तर-जवाहर' में केवल विशेष अवसरों पर प्रकट किए गए उनके विचार निबद्ध हैं। गीतों के प्रारम्भ में दो या तीन वाक्यों की संक्षिप्त भूमिका है जिसमें संक्षेप में घटना और गीत में अभिव्यक्त विचार का सार रखा गया है। ग्रन्थ के अन्त में कवि ने दो गीत उपसंहार रूप में लिखे हैं। प्रथम गीत नेहरू जी के निर्वाण पर लिखा गया है एवं द्वितीय स्मृतिलेख है। इस प्रकार कवि ने नायक के जन्म से लेकर मरणपर्यन्त समस्त घटनाओं को गीत रूप में प्रस्तुत किया हैं। इसमें कवि ने कहीं-कहीं स्वयं पंडित जी द्वारा उक्त वचनों को ही गीतरूपेण प्रस्तुत कर दिया है।

जवाहर-जीवनम्

श्री रामशरण शास्त्री द्वारा रचित 'जवाहर-जीवनम्'[२] इक्कीस शीर्षकों में विभाजित है—वन्दे भारतमातरम्, गान्ध्यष्टकम्, जवाहर-वन्दनम्, अवतरिका, आनन्दभवन-वर्णनम्, जवाहर-जन्म, बाल्य-वैभवम् प्रवृत्तयश्च, कमला-परिणयः, काश्मीर-सुषमा, स्वराज्यान्दोलनम्, जयतु...नगरे, आहुतयः, विजय-पर्वः, प्रधान-मन्त्रित्वम्, राष्ट्र-शोकः, कर्णधारः, स्वर्गारोहणम्, इन्दिरा-प्रिय-दर्शिनी, विश्वात्मा, श्रद्धाञ्जलयः एवं ग्रन्थ-सारः। काव्य के प्रारम्भ में मंगलाचरण के रूप में भारत-माता की वन्दना करता हुआ कवि इसकी आध्यात्मिक, प्राकृतिक आदि विभूतियों को नमन करता है। 'गान्ध्यष्टकम्' में आठ श्लोकों में गान्धि जी को प्रणाम कर कवि 'जवाहरवन्दनम्' पर आता है। चौदह श्लोकों में जवाहरलाल की स्तुति करता है एवं उन्हें भारत का रक्षक बताता है—

जकारं तु जगन्नाथाद् वासुदेवाद्धि वाक्षरम्।
हरं हरि-हरान्नीत्वा रक्षकोऽभूज्जवाहरः ॥[३]

---

१. जयहिन्द प्रकाशन, मुंबई-२, द्वारा प्रकाशित।
२. सेवक संघ, बरनाला, पंजाब से प्रकाशित।
३. जवाहर-जीवनम्, श्रीजवाहर-वन्दनम्, श्लोक ८।

अर्थात् जगन्नाथ से ज, वासुदेव से व तथा हरि-हर से हर वर्ण लेकर जवाहर भारत के रक्षक बने ।

इन स्तुतियों के अनन्तर कवि ने धर्म एवं संस्कृति के पवित्र पृष्टाधार पर पण्डित नेहरू की जीवन-यात्रा अंकित की है । इसमें नेहरू परिवार के पूर्वजों का कश्मीर से दिल्ली आगमन, आगरा एवं प्रयाग-निवास आदि से लेकर जवाहर के मरणोपरान्त तक की घटनाओं का रोचक, सुन्दर एवं आकर्षक वर्णन है ।

जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्

श्री रमाकान्त मिश्र द्वारा रचित 'जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्'[1] कर्त्तव्यनिष्ठ नेहरू-परिवार के देशप्रेम को प्रकट करने वाला दो अंकों का नाटक है । देश की स्वतन्त्रता एवं उत्थान के लिए नेहरू-परिवार ने जो बलिदान किए उनका बहुत ही सुन्दर चित्रण इस नाटक में किया गया है । ऐश्वर्य एवं वैभव के वातावरण में पले होने पर भी श्री नेहरू ने देश की स्वतन्त्रता के लिए समस्त वैभव को ठुकराकर एवं समस्त सुख-सुविधाओं का बलिदान कर अपने को पूर्णरूपेण देशार्थ अर्पित कर दिया । मानवीय गुणों के आगार नेहरू के जीवन के उपर्युक्त पक्ष पर आधारित यह नाटक श्रीरमाकान्त जी का एक स्तुत्य प्रयास है ।

श्रीनेहरू-चरितम्

उत्तर प्रदेश में खुरजा स्थित 'श्रीराधाकृष्ण-संस्कृत-महाविद्यालय' के प्रधानाचार्य एवं साहित्य-विभागाध्यक्ष पद को सुशोभित करने वाले, अनेक ग्रन्थों[2] के प्रणेता पं० ब्रह्मानन्द शुक्ल द्वारा प्रणीत 'श्रीनेहरू-चरितम्'[3] अष्टादश सर्ग निबद्ध उत्कृष्ट महाकाव्य है । इस चरित्र काव्य में श्री नेहरू जी के चरित्र को पूर्वजन्म की आध्यात्मिक पृष्ठभूमि से परिपुष्ट कर अत्यन्त महान् रूप में प्रतिष्ठित किया गया है । बाल्यकाल से लेकर उनकी मृत्युपर्यन्त

---

१. चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी से प्रकाशित ।

२. 'श्रीगान्धिचरितम्', उद्बोधन', 'मणि-निग्रह', 'भारत-सुषमा', 'आश्वासनम्', 'वस्त्रावतारः' आदि मौलिक कृतियों के रचयिता एवं 'मृच्छकटिकम्' 'उत्तररामचरितम्', 'सावित्र्युपाख्यानम्' एवं 'हर्षचरितम्' के व्याख्याता' ।

३. ब्रह्मानन्द शुक्ल द्वारा खुरजा से प्रकाशित । वितरक—शारदा सदन, २८ राधा कृष्ण, खुरजा, (उ० प्र०) भारत ।

जीवन की प्रमुख घटनाएँ, उनके गुणों को प्रकाशित करते हुए दी गई हैं। कवि ने प्रथम सर्ग में मङ्गलाचरण के उपरान्त कथावस्तु को संकेतित किया है; द्वितीय सर्ग में कश्मीर की दिव्य शोभा का वर्णन एवं श्रीमोतीलाल नेहरू का परिचय है। तृतीय सर्ग में पुत्र अभाव में मोतीलाल की व्यथा एवं योगी प्रदत्त वरदान, चतुर्थ सर्ग में जवाहर-जन्म एवं पंचम सर्ग में उनके चूड़ाकरण, यज्ञोपवीत आदि संस्कारों का उल्लेख, षष्ठ सर्ग में शिक्षा के निमित्त इंग्लैण्ड जाना एवं उनका व्यवहार वर्णित है। सप्तम सर्ग में नेहरू की अमेरिका-यात्रा का वर्णन है। अष्टम सर्ग में मोतीलाल द्वारा वर्णित भारत की दुर्दशा एवं नेहरू की बाँकीपुर यात्रा, नवम सर्ग में आत्मचिन्तन एवं हरिवन्दना, दशम सर्ग में नेहरू की विवाह-सम्बन्धी वार्ता, एकादश सर्ग में वर-पक्ष द्वारा कन्या देखने का एवं विवाह की तैयारी का वर्णन है। द्वादश सर्ग में जवाहरलाल के विवाह से पूर्व की गई माङ्गलिक क्रियाओं का एवं विवाह संस्कार का वर्णन, त्रयोदश सर्ग में भारत की दुर्दशा, कमला की रुग्णता तथा महात्मा गान्धि के सान्निध्य में नेहरू के कारागार-वास, स्वतन्त्रतार्थ नेहरू जी के विविध प्रयत्न तथा मातापिता एवं पत्नी का स्वर्गवास वर्णित है। चतुर्थ सर्ग में इन्दिरा शिक्षण, 'भारत छोड़ो' की घोषणा, स्वतन्त्रताप्राप्ति एवं नेहरू तथा राजेन्द्र प्रसाद के प्रधान मन्त्री तथा राष्ट्रपति बनने का उल्लेख है। पंचदश सर्ग में भारत का विभाजन, तज्जन्य नरसंहार, शरणार्थियों की समस्या तथा महात्मा गान्धि के निधन का वर्णन है। षोडश सर्ग में भारत के उत्थान के लिए नेहरू द्वारा किए गए कार्यों का वर्णन, सप्तदश सर्ग में देश के नव निर्माणार्थ बनाई गई योजनाओं का वर्णन है अष्टादश सर्ग में नेहरू के निधन का मार्मिक चित्रण हुआ है। इस अन्तिम सर्ग में कवि ने नेहरू की अन्तिम अभिलाषा को भी प्रकट किया है—

यमुना-तीर एवात्र देह-दाहो विधीयताम् ।
अस्थीनि मम गङ्गायां प्रक्षेप्तव्यानीति कामये ॥
किञ्च भस्मावशेषोऽपि सावधानतया जनैः ।
वायुयानं समारुह्य सर्वदिक्षु निपात्यताम् ॥
येनान्ते कथयिष्यन्ति जना भारतसेवकः ।
मृत्तिकातोऽस्य देशस्य विलीनोऽप्यत्र संबभौ ॥[1]

अर्थात् यहाँ यमुना के किनारे पर ही मेरे शरीर का दाह कर दिया जाय और मेरी अस्थियाँ गङ्गा में फेंक दी जावें, मैं यह चाहता हूँ। और

१. श्रीनेहरूचरितम्, १८/४९-५१।

अवशिष्ट भस्म को सावधानतापूर्वक लोगों द्वारा वायुयान पर चढ़कर सब दिशाओं में बखेर दिया जाय जिससे लोग अन्त में कहेंगे कि 'वह भारत का सेवक इस देश की मिट्टी से उत्पन्न हुआ और इसी में मिल गया।'

नेहरू-यशः-सौरभम्

'नेहरू-यशः-सौरभम्'[1] नेहरू परक संस्कृतवाङ्मय का सर्वोत्कृष्ट रत्न है। बारह सर्गों के इस महाकाव्य की रचना 'चक्रव्यूह' नामक प्रसिद्ध खण्ड-काव्य के रचयिता गोस्वामी बलभद्र प्रसाद शास्त्री ने (जो उ० प्र० सरकार की समुदायिक विकास सेवा में राजपत्रित अधिकारी हैं।) अत्यन्त भावुकता-पूर्वक तथा मंजी हुई लेखनी से की है। कवि की सौरभमयी इस कृति के प्रथम सर्ग में भारतमातृभूवन्दन, कश्मीर-सुषमा, तत्रोद्भूत कौलवंश का दिल्ली आगमन, मोतीलाल नेहरू का जन्म एवं चरित्र चित्रित है। द्वितीय सर्ग में मोतीलाल की तीर्थयात्रा, जवाहर-जन्म, शैशव, शिक्षार्थ विदेशगमन एवं राष्ट्रप्रेम का वर्णन है। तृतीय सर्ग में नेहरू विवाह तथा चतुर्थ सर्ग में स्वतन्त्रता के विषय में मोतीलाल एवं जवाहरलाल का संवाद वर्णित है। पंचम सर्ग में राष्ट्रमुक्ति-संघर्ष, साइमन, प्रिंस ऑफ वेल्स आगमन पर विरोध-आन्दोलन का वर्णन है। षष्ठ सर्ग में मोतीलाल एवं कमला नेहरू के निधन पर शोक, सप्तम सर्ग में जवाहर के राष्ट्र-मुक्ति-संघर्ष में निष्काम भाव से आत्म-समर्पण एवं भारत की मुक्ति का आन्दोलन, अष्टम सर्ग में भारत की स्वाधीनता प्राप्ति एवं उसका उत्सव वर्णित है। नवम सर्ग में स्वाधीन राष्ट्र के प्रधान मन्त्री पद पर आसीन जवाहरलाल नेहरू का वर्णन है, दशम सर्ग में चीन के आक्रमण के समय भारतीय वीरों के शौर्य का उल्लेख है एवं एकादश सर्ग में जवाहरलाल के स्वर्गारोहण का तथा द्वादश सर्ग में जवाहरलाल की पुत्री श्रीमती इन्दिरा गाँधी के प्रधान-मन्त्री पद पर आरूढ़ होने का वर्णन है।

---

१. गोस्वामी प्रकाशन, सकाहा, हरदोई।

२

नेहरू-विषयक संस्कृत-वाङ्मय में आधुनिक इतिहास

नेहरू-विषयक संस्कृत-वाङ्मय का एक प्रमुख वैशिष्ट्य यह है कि इसमें आधुनिक इतिहास का समावेश है। संस्कृत के कवियों पर प्रायः यह आरोप लगाया जाता है कि वे इतिहास के प्रति उदासीन होते हैं किन्तु २०वीं शती में रचित नेहरू विषयक काव्यों से इस आरोप का सर्वथा निराकरण हो गया है। इन ग्रन्थों के रचयिता इतिहास के प्रति पूर्ण जागरूक दिखलाई पड़ते हैं। इन रचनाओं में उपलब्ध इतिहास चित्रण का हम (क) विश्वेतिहास, (ख) भारतीय स्वातन्त्र्य संघर्ष का चित्रण तथा (ग) स्वतन्त्र भारत की प्रमुख घटनाएँ इन उपशीर्षकों में अध्ययन करेंगे।

(क) विश्वेतिहास

नेहरू वाङ्मय के रचयिताओं ने नेहरू जी के जीवनकाल की न केवल भारतीय इतिहास की अपितु विश्वेतिहास की अनेक प्रमुख घटनाओं का भी सुन्दर चित्रण किया है। इससे प्रतीत होता है कि कवियों ने तत्कालीन इतिहास का भी गम्भीर अध्ययन किया है। 'जवाहर-जीवनम्', 'श्रीनेहरू-चरितम्', 'नेहरूयशः-सौरभम्' एवं 'जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्' में विश्वेतिहास की घटनाओं का अधिक उल्लेख मिलता है। यह स्पष्ट है कि विश्वेतिहास की इन सभी घटनाओं से नेहरू व भारत का भी सम्बन्ध रहा है। ये घटनाएं स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व, पश्चात् व नेहरू की मृत्यु के बाद की हैं।

प्रायः इन सभी ग्रन्थों में हमें प्रथम महायुद्ध का वर्णन मिलता है। अंग्रेजों के भारत पर शासनकाल के समय जर्मनी ने यूरोप पर आक्रमण कर दिया। यूरोप के इस अंग्रेज बिनाशी प्रथम युद्ध में भारतीय वीर सैनिकों ने अंग्रेजों की शौर्यपूर्ण सहायता की थी। तब भारतीयों की युद्ध-सामर्थ्य से

भीत दुष्ट-हृदय कुलक्षण गोरों ने रौलट-एक्ट जैसे बुरे कानून को बनाया—

प्रथमे समरे घोरे गौरविध्वंसकारके
साहाय्यमाचरन् शौर्यं वीरा भारतसैनिकाः ।
तदेषां युद्धसामर्थ्याद् भीता गौराः कुलक्षणाः
रौलटैक्टं दुष्ट-विधिं कृतवन्तो दुरोदराः ।।[1]

भारत को स्वाधीनता देने के स्थान पर दिया विनाशी व दुष्ट रौलट ऐक्ट । गौरों ने पहले प्रतिज्ञा की थी कि युद्ध जीतकर भारत को स्वाधीन कर देंगे, किन्तु रौलट ऐक्ट से भारत को और पीड़ित किया, विजयोद्धत गोरे प्राणरक्षकों को भूल गए—

स्वाधीनताप्रदानस्य स्थाने रौलट-नामकम् ।
भारताय विधिं निन्द्यं प्रादुर्गौरव-नाशनम् ।।
प्रतिश्रुतं तु स्वातन्त्र्यं पूर्वं युद्धाद्विनिश्चितम् ।
यदा युद्धं विजेष्यामो मोक्ष्यामो भारतीं महीम् ।।
परं रौलटविधानेन पीडितो भारतो भृशम् ।
विजयेनोद्धता गौरा विस्मृताः प्राणरक्षकान् ।।[2]

इस प्रकार श्रीरामशरण शास्त्री ने अंग्रेजों के काले कृत्य का ठीक उल्लेख किया है।

'जवाहर-जीवनम्' में हमें रूस की क्रान्ति का भी उल्लेख मिलता है । रूस की क्रान्ति की दसवीं वर्षगांठ के उत्सव को देखने के लिए पं० जवाहर-लाल अपने पिता के साथ वहाँ गए । जवाहरलाल ने रूस-वासियों के राष्ट्र निर्माणार्थ सम्यक् उत्साह, दृढ़ निश्चय इत्यादि को देखा। उन्होंने देखा कि रूस-निवासी क्लेश सहन करते हुए भी संयम से हंस-मुख, प्रसन्नचित्त, सद्व्रती तथा दृढ़-निश्चयी हैं । रूस-निवासी सारे देश की उन्नति तथा उद्धार में सयत्न हैं । उनके इस सम्यक् प्रयत्न का जवाहरलाल पर अच्छा प्रभाव पड़ा—

दशमे ह्युत्सवे चास्याः क्रान्त्याः लोकैरुपस्थिते ।
जवाहरो गतो रूसं द्रष्टुं स्वातन्त्र्य-मंगलम् ।।
तदा हि रूस-देशीयाः संयताः क्लिष्ट-जीवनाः ।
सुस्मितास्याः प्रकाशाङ्गाः सुव्रता दृढनिश्चयाः ।।

---

१. जवाहर-जीवनम्, २०३,२०४ श्लोक ।
२. वही, २०८-२१० श्लोक ।

सयत्ना रूसमुद्धतुं सर्वं देशं समुन्नतम् ।
द्रष्टुमेषां समुत्साहं सुप्रभावो जवाहरः ॥[1]

१९३९ के भयानक द्वितीय महायुद्ध में अंग्रेजों ने भारतीयों से सहायता माँगी किन्तु प्रथम महायुद्ध की घटना से अंग्रेजों के प्रति अविश्वस्त भारतीयों ने सहायता देना स्वीकार नहीं किया ।

वाञ्छितं तु तदांग्रेजैः साहाय्यं भारतोद्भवम् ।
अविश्वस्ताः परं लोकाः प्रतिज्ञाभ्रष्टशासनात् ॥[2]

इस सबका वर्णन लेखक ने अत्यन्त यथार्थ किया है ।

'नेहरू-यशः-सौरभम्' में हमें अंग्रेजों को आतंकित कर देने वाले जापान के आक्रमण का भी वर्णन मिलता है । दुर्जय शक्ति का आश्रय लेकर, जापान ने सहसा आक्रमण करके अंग्रेजों को आतङ्कित कर दिया । ऐसा प्रतीत होने लगा मानो साम्राज्य ध्वस्त होने वाला है—

दुर्जेयां शक्तिमाश्रित्य
जापानः सहसाऽऽङ्गलान् ।
आक्रम्यातङ्कितांश्चक्रे
साम्राज्यं पातयन्निव ॥[3]

शीघ्रता से साम्राज्य देशों को परास्त करके (जापान की) उस सेना ने बर्मा देश पर आक्रमण कर जब भारतवर्ष की सीमा का स्पर्श किया उस समय जापान के प्रतिरोध के लिए भारतीय जनता का उद्यम डूबने वाले के लिए नौका के समान, अंग्रेजों के हित में था—

पूर्व-साम्राज्यदेशान् वै
पराजित्य प्रवेगतः ।
ब्रह्मदेशं समाक्रम्य
भारतं सास्पृशद् यदा ॥[4]

---

१. जवाहर-जीवनम्, श्लोक २५०-५३ ।

२. वही, आहुतयः, श्लोक २९६ ।

३. नेहरू-यशः-सौरभम् ७/२६ ।

४. वही ७/२८ ।

उस समय ब्रिटिश प्रधानमन्त्री चर्चिल स्वार्थसिद्धि के लिए सब वर्गों का संगठन करने के लिये उत्सुक हो उठे। अतः सत्याग्रह में बन्दी राष्ट्र-नायक एवं वीर मुक्तिसैनिकों को विवश होकर शासकों ने छोड़ दिया—

विख्यातः स्वार्थसंधाने प्रख्यातः चर्चिलस्तदा।
भारते सर्ववर्गाणामभूत् संगठनोत्सुकः ॥
अतः सत्याग्रहे सर्वान् बन्दिनो राष्ट्रनायकान्।
विवशाः शासका वीरानमुञ्चन् मुक्ति-सैनिकान् ॥[1]

शासकों के आदेश से भारत को मानों सान्त्वना देता हुआ क्रिप्स-आयोग जन नायकों से समझौता करने के लिए आया—

शासकानां निदेशेन भारतं सान्त्वयन्निव।
क्रिप्सायोगः समायातः सन्धातुं जननायकान् ॥[2]

तब जवाहरलाल जी ने क्रिप्स के द्वारा प्रस्तुत प्रस्ताव पर विचार करके, उसे मधु से लिप्त विष-भरा मोदक ही माना—

समीक्ष्य प्रस्तुतं तत्र क्रिप्सेनापि जवाहरः।
मधुलिप्तमसौ मेने प्रस्तावं विषमोदकम् ॥[3]

क्रिप्स की प्रस्तावना भङ्ग होने से अंग्रेजों की प्रतिक्रिया असंयत वचनों से भरी हुई पागलों के प्रलाप जैसी हो गई—

क्रिप्स-प्रस्तावना-भङ्गादाङ्गलानां प्रतिक्रिया।
असंयत-वचो-व्यग्रा भूतोन्मत्त-प्रलापना ॥[4]

जापान के आक्रमण से त्रस्त होने पर भी शासकों ने भारत को प्रशासन देना स्वीकार नहीं किया—

जापानाक्रमणात् त्रस्ता
अपि श्वेताङ्गशासकाः।
न प्रदातुमुरीचक्रु-
र्भारतस्य प्रशासनम् ॥[5]

---

१. नेहरू-यशः-सौरभम्, ७।३०-३१।
२. वही, ७।३२।
३. वही, ७।३४।
४. वही, ७।३८।
५. वही, ७।३९।

अणुविस्फोट से ध्वस्त जापान का मार्मिक चित्रण भी 'नेहरू-यशः-सौरभम्' में मिलता है । अणुविस्फोट से ध्वस्त विपन्न, जापान देश का सहसा पतन हो गया, जहाँ काल अपना मुख फैलाकर अट्टहास के साथ मानवता को चाट गया—

ध्वस्तोऽणुविस्फोटवशाद् विपन्नो
'जापान' देशः सहसा पपात ।
व्यादाय कालो मुखमट्टहासै-
र्यत्र स्थितां मानवतामलीढ ॥[1]

क्रूर हिटलर का वर्णन भी इस ग्रन्थ में हुआ है ।[2]

रण से थका हुआ विश्वमत न केवल शान्तिमय हो गया, अपितु विदेशी दासता से मुक्ति के संघर्ष का भी समर्थक हो गया—

श्रान्तं रणाद् विश्वमतं समन्तान्
न केवलं शान्तिपरं बभूव ।
समर्थयामास विदेशि-दास्याद्
विमुक्ति-संघर्षमपि प्रजानाम् ॥[3]

तभी चर्चिल शासन की पराजय से और श्रमजीवियों के निर्वाचन से, विश्व के मतानुरूप ब्रिटेन का प्रशासन पदारूढ़ हुआ—

पराजयाच्चर्चिल-शासनस्य
निर्वाचनेन श्रमजीविनां वै ।
प्रशासनं विश्वमतानुरूपं
ब्रिटेन-देशस्य हि वै प्रपेदे ॥[4]

यह तो स्वतन्त्रता प्राप्ति से पूर्व के विश्वेतिहास का वर्णन है । इन ग्रन्थों में हमें स्वातन्त्र्य-संघर्ष का एवं स्वतन्त्रता प्राप्ति के पश्चात् के विश्व इतिहास का भी वर्णन मिलता है । इसमें विदेशियों के आगमन, विदेश-

---

१. नेहरू-यशः-सौरभम्, ८।२ ।
२. वही, ८।३ ।
३. वही, ८।४ ।
४. वही, ८।५ ।

नीति एवं चीन के आक्रमण आदि घटनाओं का वर्णन प्रमुख रूप से हुआ है।

'नेहरू-यशः-सौरभम्' में भारत की राष्ट्रसंघ की सदस्यता का वर्णन भी हुआ है।[1] भारत ने विश्व के इतिहास में शीघ्र ही अपना उच्च स्थान बना लिया। भारत में कभी रूसी नेता तो कभी अमेरिका-पति आने लगे—

कदाचिदायाति स रूसभूषणः
कदाचिदायाति स मिश्रमण्डनः।
अमेरिकायाः पतिरस्य बान्धवः
सोऽमेरिकायाः पतिरस्य बान्धवः ॥[2]

तिब्बत पर चीन के आक्रमण के समय दलाईलामा के भारत में रहने से चीन क्रुद्ध होगा इसकी कल्पना नेहरू जी को न थी। उन्होंने उसे मंसूरी के महल में रख दिया। तभी चीन ने हम पर आक्रमण किया। प्रच्छन्न रूप से साम्राज्यवाद के मित्र चीन के प्रशासकों ने चारों ओर मिथ्या भ्रातृ-भाव-प्रदर्शन करते हुए, बौद्ध अनुयायी तिब्बत प्रदेश को बलपूर्वक हथिया लिया—

प्रच्छन्नसाम्राज्यसखाः समन्तात्
प्रदर्शयन्तः किल भ्रातृभावम् ॥
त्रिविष्टपं बौद्धमतानुयायि-
प्रदेशमेते लिलिहुः प्रसह्य ॥[3]

चीन ने गुप्त रूप से हिमालय की भूमि में मार्ग बनाकर भारत में भी चिरविग्रह का बीज बो दिया—

चीनस्तदा गुप्तगतिश्छलेन
मार्गं विनिर्माय हिमाद्रिभूमौ।
उवाप बीजं चिरविग्रहस्य
पुण्यप्रदेशे ननु भारतस्य ॥[4]

---

१. नेहरू-यशः-सौरभम्, ९।१० ।
२. गान्धिबान्धवम् ।
३. नेहरू-यशः-सौरभम्, १०।३।
४. वही०, १०।८।

युद्ध में विविध शस्त्रों वाली सेना द्वारा चारों ओर से हठात् प्रहार करते हुए उसने युद्ध के ज्वार से भारत रूपी शान्त समुद्र को उद्वेलित कर दिया—

सेनाभिराजौ विविधायुधाभि-
रसौ समन्तात् प्रहरन् प्रसह्य ।
उद्वेलयामास तथा हि युद्ध-
ज्वरेण वै भारतशान्तसिन्धुम् ॥[१]

युद्ध में धन्यतम वीरों ने आर्यव्रत में निष्ठित अपने पूर्वजों के समुद्दीप्त शौर्य, सम्मान, राष्ट्र-प्रतिष्ठा एवं प्रशस्त कीर्ति की, अपने प्राणों की आहुति देकर भी रक्षा की—

सम्मानमार्यव्रतनिष्ठितानां
शौर्यं समुद्दीप्तमिवाग्रजानाम् ।
राष्ट्रप्रतिष्ठां महनीयकीर्ति
प्राणै रणे धन्यतमा ररक्षुः ॥[२]

'नेहरू-यशः-सौरभम्' में नेहरू जी के बाद की घटनाओं का भी चित्रण है किन्तु यहाँ यह अधिक अभिप्रेत न होने के कारण घटनाओं का संकेत मात्र दिया जा रहा है—

ताशकन्द समझौता[३] 'पाकिस्तान एवं बंगला देश का गृहयुद्ध,[४] भारत का बंग प्रदेश को सहयोग,[५] बंगवासियों द्वारा 'जनमुक्तिवाहिनी' का निर्माण[६] पाकिस्तान का भारत पर आक्रमण,[७] भारत की विजय[८] एवं एक नव राष्ट्र बंग प्रदेश का उदय वर्णित है। रण में विजय से न केवल बंगला देश का

१. नेहरू-यशः-सौरभम्, १०।१२।
२. वही, १०।२३।
३. वही, १२।३।
४. वही, १२।२८।
५. वही, १२।३७,३८।
६. वही, १२।४३।
७. वही, १२।४५।
८. वही, १२।५०।

नवोदय हुआ अपितु विश्व में चारों ओर भारतवर्ष के शौर्य की प्रतिष्ठा हुई—

विजयेन रणे न केवलं
बंगला-देश-नवोदयोऽभवत् ।
अभवत् परितः प्रतिष्ठितं
भुवने भारत-वर्ष-विक्रमम् ॥[1]

पुनः शिमला में भारत-पाकिस्तान की संधि[2] का वर्णन भी 'नेहरू-यशः-सौरभम्' में हुआ है ।

(ख) भारतीय स्वातन्त्र्य-संघर्ष का चित्रण

नेहरू विषयक संस्कृत वाङ्मय में स्वतन्त्रता-संग्राम का एवं तत्कालीन भारत की दशा का वर्णन भी पर्याप्त हुआ है । 'श्रीनेहरूचरितम्' में कवि भारत की परतन्त्रता का कारण पारस्परिक विरोध को मानता है। यहाँ कवि इतिहास के धरातल से उठकर द्रष्टा के धरातल का स्पर्श करता प्रतीत होता है —

अस्माकमेव सुचिरस्य विरोधभावाद् दुर्दैव-दूषित-दुराग्रह-पारवश्यात् ।
नानानियन्त्रणवती भरतस्य भूमिर्दासीकृता नरपतेर्महिषीव जाता ॥[3]

अर्थात् हमारे ही पुराने (पारस्परिक) विरोध के कारण, दुर्भाग्य के दूषित दुराग्रह से जन्य पारतन्त्र्य के कारण अनेक यन्त्रणाओं से भारतभूमि राजा की उस पटरानी के समान हो गई जिसे दासी बना दिया हो ।

जिनके पराक्रम से संग्राम-भूमियों में मदोन्मत्त शत्रुओं की सेना का पराक्रम अस्त हो जाता था, दुर्भाग्य ! अब वे ही समस्त राजागण काल के प्रभाव के वशीभूत होकर व्यसनों (१) कुकर्मों (२) आपत्तियों में फंस गए—

संग्रामभूमिषु यदीयपराक्रमेण
दुर्दान्तवैरिदलमस्तबलं बभूव ।
हा हन्त ! सम्प्रति समे वसुधाधिपास्ते
काल-प्रभाव-वशगा व्यसने निमग्नाः ॥[4]

१. नेहरू-यशः-सौरभम्, १२।५२ ।
२. वही, १२।५७ ।
३. श्रीनेहरू-चरितम्, १।२४ ।
४. वही, १।२५ ।

किन्तु परतन्त्रता के पश्चात् धीरे-धीरे यहाँ भी जागृति आने लगी—

चक्रारपङ्क्तिसदृशं पुरुषस्य भाग्यं निम्नोन्नतं भवति यन्निगदन्ति विज्ञाः। तत्सत्यमेव घटते ननु भारतेऽपि स्फूर्तिः कथं कथमपि प्रथिताऽत्र जाता।[1]

अर्थात् 'पहिये के अरों की भाँति, पुरुष का भाग्य (कभी) नीचा [और कभी] ऊँचा होता रहता है'—यह जो विज्ञ जन कहते हैं, वह सत्य ही भारत पर भी चरितार्थ हुआ (क्योंकि) जैसे-तैसे यहाँ भी जागृति होने लगी।

स्वतन्त्रता प्राप्त करने की इच्छा से 'जागृत लोगों ने संगठित होकर 'काँग्रेस' संज्ञक संस्था का निर्माण किया। परतन्त्रता की बेड़ियों में जकड़ी हुई अपनी वृद्धा माता की भाँति मातृभूमि को अत्यन्त दुःखी देखकर वे 'काँग्रेस' संस्था का निर्माण करके, स्वतन्त्रता प्राप्त करने की इच्छा से संगठित हो गए—

ते पारतन्त्र्य-निगडैरतिमात्रदूनां
वृद्धामिव स्वजननीमवलोक्य भूमिम्।
'काँग्रेस'-संसदमथो परिकल्प्य सर्वे
स्वातन्त्र्यमाप्तुमनसो मिलिता बभूवुः ॥[2]

स्वतन्त्रता के लिए कटिबद्ध इन पुरुषों में कुछ तीक्ष्ण बुद्धि वाले लोगों का मत था कि शान्ति द्वारा शीघ्र स्वतन्त्रता नहीं मिल सकती। अतः वे शान्तिप्रिय नेताओं से अलग हो गए। इस प्रकार दो दल हो गए—

'सद्यः फलाय न भविष्यति शान्तिमार्गः'
इत्याकलय्य कतिचिद्धिमता बभूवुः।
गौराङ्ग-नीति-कलनां विकलां विधातुं
हिंसास्त्रतां निजकरे निगृहीतवन्तः ॥[3]

अर्थात् 'शान्ति का मार्ग शीघ्र फल देने वाला नहीं होगा', यह सोचकर कुछ लोग उनसे अलग हो गए और अंग्रेजों के नीति जाल को छिन्न-भिन्न करने के लिए उन्होंने हिंसा का अस्त्र अपने हाथ में ले लिया।

---

१. श्रीनेहरूचरितम् १।२८।

२. वही, १।३०।

३. वही, १।३३।

किन्तु महात्मा गांधि का विचार इससे भिन्न था अतः वे पूर्णतः शान्ति व अहिंसा के मार्ग से स्वतन्त्रता के लिए प्रयत्नशील हो गए। महात्मा गांधि द्वारा प्रचलित अहिंसा-मार्ग वाले इस आन्दोलन की लहर सारे भारत में फैल गई। देशभक्त नेहरू-परिवार भी इस लहर से अछूता न रह सका।

'श्रीनेहरू-चरितम्' में मोतीलाल नेहरू द्वारा देश की दुर्दशा का वर्णन करके जवाहर में देशभक्ति का भाव जगाया गया है। इससे तत्कालीन स्थिति पर अच्छा प्रकाश पड़ता है।

भारत की दुर्दशा का वर्णन करता हुआ मोतीलाल जवाहरलाल नेहरू को कहता है कि बेटा ! यह भारत देश इस समय अंग्रेजों द्वारा आक्रान्त है। सब लोग यहाँ प्रतिदिन दासों की भाँति अत्यधिक पीड़ा प्राप्त करते हैं—

वत्साधुना भारत देश एष
गौराङ्ग-शास्ति-प्रतिघर्षितोऽस्ति ।
सर्वे जनाः प्रत्यहमत्र पीडां
विन्दन्ति दासा इव निर्विशेषम् ॥[1]

लोक-व्यवहार में स्वातन्त्र्य का लेश भी नहीं है और न यहाँ के विचार ही परिष्कृत हैं। पिंजड़े में बन्द सिंहों की भाँति विज्ञ भी क्लेश-परम्परा को ढो रहे हैं—

स्वातन्त्र्य-लेशोऽपि न लोक-कृत्ये
नो वा विचारः परिमार्जितोऽस्ति ।
सिंहा यथा पञ्जरबद्धगात्रा
विज्ञा अपि क्लेश-ततिं वहन्ति ॥[2]

अंग्रेज-शासक कूटनीति का प्रयोग करके यहाँ एक-दूसरे को लड़ा देते हैं और जैसे भी हो उसी उपाय से अपनी कार्य-सिद्धि कर लेते हैं—

कूटप्रयोगं परिकल्प्य लोका-
नन्योन्य-युद्धे विनियोजयन्ति ।
तैस्तैरुपायैर्निजकार्यसिद्धिं
गौराङ्गधुर्याः परिकल्पयन्ति ॥[3]

१. श्रीनेहरू-चरितम् ८।१४।
२. वही, ८।१५।
३. वही, ८।१६।

उनके प्रभाव से सारे देश में दरिद्रता का राज्य अबाध गति से फैल रहा है। अन्न के बिना बच्चे भी बड़ी मात्रा में प्राणों को छोड़ रहे हैं—

तेषां प्रभावान्निखिलेऽपि देशे
दारिद्रय-राज्यं विलसत्यजस्रम् ।
अन्नं विना प्राण-वियोग-योगं
बाला अपि स्फीततरं भजन्ते ।।[1]

दुराचारों की कोई सीमा नहीं है और अन्याय-वृद्धि का भी कोई अन्त नहीं है। दुर्भावनाओं से (श्रेष्ठ बातों के) प्रभाव को निर्वासित करके यह देश अपमानित स्थिति को प्राप्त हो गया है—

सीमा न चास्ते खलु दुष्कृतीना-
मन्याय-वृद्धेरपि नास्ति चान्तः ।
दुर्भाव-निर्वासित-सत्प्रभावो
देशः पराभूति-पदं प्रपन्नः ।।[2]

जो कभी सच्चाई ग्रहण करते हैं उन्हें ठोकर मार दी जाती है और वे जेलों में ठूंसे जाकर नाना प्रकार की यातनाओं को सहन करते हैं—

ये वा कदाचित् किल सत्यभावं
गृह्णन्ति ते वै प्रपदाहताः स्युः ।
कारागृहान्तर्विनिपात्यमाना
नानाविधं कष्टचयं सहन्ते ।।[3]

ओह ! ये हमारे नेतागण नाना प्रकार का तिरस्कार पाते हैं और यहाँ निन्दित कर्म करने के लिए नित्य कोड़ों की मार सहते हैं—

अस्माकमेते किल नेतृमुख्या
नानाविधां न्यक्कृतिमाश्रयन्ते ।
निन्द्यानि कार्याणि विधातुमत्र
नित्यं कशाघातमहो ! सहन्ते ।।[4]

---

१. श्री नेहरू-चरितम् ८।२१ ।
२. वही, ८।२३ ।
३. वही, ८।२४ ।
४. वही, ८।२६ ।

इस प्रकार भारत की दुर्दशा का वर्णन कर मोतीलाल जवाहरलाल नेहरू को अंग्रेजों के इस अत्याचार का विरोध करने के लिए प्रेरित करता है कि इस प्रकार के निन्दित कर्मों का अन्त करने के लिए तुम तैयार हो जाओ। बेटे ! न्याय से अन्याय के बल को जीतने के लिए तुम्हें धैर्यधनी होना चाहिए—

एवंविधानामिह दुष्कृतीना-
मन्तं विधातुं भव सज्जितस्त्वम् ।
न्यायेन चान्याय-बलं विजेतुं
वत्स ! त्वया धैर्यधनेन भाव्यम् ॥[1]

अब मोतीलाल नेहरू को शिक्षार्थ पाश्चात्य देशों में भेजने का उद्देश्य बताता हुआ कहता है कि इसी लिए मैंने तुम्हें पाश्चात्य देश में अध्ययन करने के लिए भेजा था, जिससे उन लोगों के सम्पर्क से तुम में भी निर्भीकता एवं कर्तव्य-निष्ठा आ जाए—

इत्येतदर्थं प्रहितो मया त्वं
पाश्चात्य-देशेऽध्ययनं विधातुम् ।
संसर्गतस्त्वय्यपि निर्भयत्वं
कर्तव्य-निष्ठा च यथा भवेताम् ॥[2]

नेहरू को स्वतन्त्रता-संग्राम में भाग लेने के लिए प्रेरित करता हुआ मोतीलाल कहता है कि धीर व्यक्ति धैर्य से विपत्तियों के चरणों को काटने में समर्थ होते हैं। भारतीय काँग्रेस-सभा के सदस्य होकर तुम इस देश को स्वतन्त्र करो—

धैर्येण धीरा विपदां पदाना-
मुत्कर्तनं कर्तुमलं भवन्ति ।
देशीय 'काँग्रेस'-सभा सदस्यो
भूत्वा स्वतन्त्रं कुरु देशमेनम् ॥[3]

भारत की दुर्दशा के वर्णन को सुनकर नेहरू के हृदय में भी स्वतन्त्रता की आग धधक उठी। फलतः १९२१ में महात्मा गांधि द्वारा प्रदर्शित 'असह-

---

१. श्रीनेहरू-चरितम्, ८।२७।
२. वही, ८।२८।
३. वही, ८।२९।

कार' की भावना का नेहरू ने भी हृदय से अभिनन्दन किया।[1] स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए दृढ़ निश्चय होकर अपने पिता की आज्ञा से नेहरू उन्हीं दिनों बाँकीपुर में होने वाले कांग्रेस-अधिवेशन में गये और वहाँ कांग्रेस की सदस्यता ग्रहण कर ली—

पितुराज्ञां समादाय 'बाँकीपुर' मुपाययौ।
दृष्ट्वा तत्रत्यकार्यं च स्वीचकार सदस्यताम्।[2]

शीघ्र ही जवाहरलाल इतने लोकप्रिय हो गए कि अंग्रेज इन्सपेक्टर विक्टर को भी कहना पड़ा कि—

'जवाहरलालेन भारतीयजनचित्तमोहने सफलता सम्प्राप्ता,[3] अर्थात् जवाहर लाल ने भारतीयों के चित्त को मुग्ध करने में सफलता प्राप्त कर ली है।

काँग्रेस के कार्य में सक्रिय नेहरू सबकी अनुमति से काँग्रेस के अधिवेशन में भाग लेने के लिए सहर्ष लखनऊ गये—

ततः सर्वानुमत्यैव लक्ष्मणपुर-भाविनि।
सहर्षमगमत्सोऽपि काँग्रेसस्याधिवेशने॥[4]

उन्होंने अंग्रेजों की नीति ध्वस्त करने के लिए अनेक गतिविधियों का संचालन किया—

क्वचित्समाचारगतेर्निरोधं
क्वचिच्च 'साईमन' संविरोधम्।
कदाचिदत्युग्रतमस्य 'होम-
रूल'स्य भङ्गाय गतिं बबन्ध॥[5]

अर्थात् कहीं राजकीय समाचारों में गतिरोध, कहीं 'साईमन-कमीशन' का विरोध (बायकाट) और कहीं उग्रतम 'होमरूल' को भङ्ग करने के लिए उन्होंने गतिविधियाँ कीं।

इन रचनाओं में उस प्रमुख घटना का भी उल्लेख हुआ है जिसमें श्रीलाला लाजपतराय प्रभृति प्रमुख व्यक्तियों द्वारा काले झण्डे लेकर (साईमन-

---

१. जवाहर-चिन्तनम्, पूर्व-जवाहरः, गीत ४।
२. श्रीनेहरु-चरितम् ८।४३।
३. जवाहरलालनेहरुविजयनाटकम्, पृ० १.
४. वही, १३।२३।
५. वही, १३।२६।

कमीशन का) विरोध करने पर मानवताहीन गोरों ने लाठी-प्रहार किया, गोरे राक्षसों की लाठियां छाती पर लगने से पंजाबकेसरी पूर्ण स्वतन्त्रता के भागी इस देश को शोकाकुल छोड़कर अमर हो गए—

श्री लाजपतमुख्येषु शोक-ध्वज-धृतेषु च ।
प्रहारो यष्टिकादीनां कृतो गौरैरमानुषैः ।।
पञ्चाम्बुकेशरी-मुख्यो लाला लाजपतोऽपतत् ।
हस्तस्तु ताडितो वक्षे निर्दयैर्गौर-राक्षसैः ।।
शोकाकुलमिमं देशं पूर्णस्वातन्त्र्यभागिनम् ।
परित्यज्यामरो जातः प्रियः पञ्चाम्बु-केशरी ।।[1]

१९३० में 'नमक-आन्दोलन' का प्रारम्भ महात्मा गान्धि ने किया । इस 'नमक-आन्दोलन' में जवाहर को भी बन्दी बना लिया गया ।[2]

१९३१ में[3] कमला के राजनीति प्रवेश का उल्लेख भी 'जवाहर-चिन्तनम्' में प्राप्त होता है। जब नेहरू जी बन्धागार में थे तब श्रीमती कमला नेहरू सत्याग्रहसमर में प्रविष्ट हुई और उन्हें भी बन्दी बना लिया गया। यह समाचार नेहरू ने कारागार में ही सुना । १९३१ में ही स्वतन्त्रता सेनानी पं० मोतीलाल नेहरू जी का देहान्त हो गया। किन्तु इस कारुणिक घटना ने नेहरू को अधिक दृढ़प्रतिज्ञ बना दिया और उन्होंने उन्मुक्त कण्ठ से कहा कि यह जान लो पुनः स्वराज्य के बिना यह ध्येय साधना नहीं रुकेगी । शरीर नष्ट होगा अथवा भारत का नव-निर्माण देखेगा—

जानीहि पुनः स्वराज्यं विना
विरमेन्नेयं ध्येयसाधना
तनुर्विनश्येदथवा पश्येद् भारतनवविभवान् ।

१९३१ में पुनः सत्याग्रह में श्रीजवाहरलाल ने भाग लिया ।[4]

वर्तुलमंचपरिषद् (गोलमेजपरिषद्) के प्रति नेहरू की आस्था नहीं थी । अपनी अनास्था को प्रकट करता हुआ नेहरू कहता है कि कुतोऽत्र सन्धी रिपुणा सार्धं, लब्ध्वा वा स्वातन्त्र्यशवार्धं नवराष्ट्रस्य कुतो निर्माणम्[5] ।

१. जवाहर-जीवनम्, स्वराज्यान्दोलनम्, श्लोक २५९-६१ ।
२. जवाहर-चिन्तनम्, पूर्व-जवाहर, गीत १३ ।
३. वही, गीत १४ ।
४. वही, गीत १५ ।
५. वही, गीत १७ ।

अर्थात् यहाँ शत्रुओं के साथ सन्धि कैसे संभव है, स्वातन्त्र्यशवार्ध प्राप्त कर नव राष्ट्र का निर्माण कैसे होगा ?

इसी काल में कमला नेहरू अस्वस्थ हो गईं । भारत में चिकित्सा सुलभ नहीं थी, अतः उन्हें 'स्विट्जरलैण्ड' भेज दिया गया किन्तु विधि के कठोर हाथों ने एक और स्वतन्त्रता सेनानी हमसे छीन लिया।[1] इस प्रकार नेहरू को एक साथ दो मृत्युओं का सामना करना पड़ा।

जलियाँ वाले बाग के नृशंस हत्याकाण्ड का मार्मिक वर्णन भी इन रचनाओं में मिलता है।

जलियाँ वाले बाग में नरमेध की निष्ठुर अग्नि में देश-हित में शरीर की आहुति देने वाले मनुष्यों के चरित्र का अनुकरण करके जनरोष चारों ओर उमड़ पड़ा—

'जलियाँ' नरमेध-निष्ठुरे
दहने देशहिते हुतात्मनाम् ।
चरितान्यनुसृत्य भारते
जनरोषः परितः समैधत ॥[2]

तब बल, बुद्धि और प्रतिभारूपी तरङ्गों से परिपूर्ण जनरोष-रूपी महासागर, तट वृक्ष की भाँति अंग्रेजी प्रशासन को ढहा देने के लिए हर ओर से उमड़ पड़ा।

जनरोष-महार्णवस्ततो
बलबुद्धिप्रतिभोर्मि-संकुलः ।
तटवृक्षमिव प्रशासनं
परितः क्रान्तुमवर्धताङ्गलम् ॥[3]

लोगों ने नगरों और चौराहों पर भारतीय हस्तकला को नष्ट करने वाली विदेश निर्मित अपनी अनेक वस्तुओं को जला डाला—

---

१. श्रीनेहरू-चरितम् १३।३४ ।

२. नेहरू-यशः-सौरभम् ५।१ ।

३. वही, ५।२ ।

नन्नु भारत-शिल्प-शातनं
विविधं वस्तुसमहमात्मनः ।
नगरेषु जनाश्चतुष्पथे-
ष्वदहन्नाङ्गलदेश-निर्मितम् ॥[1]

शासकों के अधीन न रहते हुए, नव-जागरित-राष्ट्र-चेतना वाले सहस्रों छात्रों ने जनता को दासता की दिशा का निर्देश देने वाले अंग्रेजी विद्यालयों को त्याग दिया—

नवजागरितात्म-चेतना
अवशाश्छात्रजनाः सहस्रशः ।
जनदास्यदिशानिदेशका-
नजहुर्ज्ञान-गृहानथाङ्गलान् ॥[2]

पूरी तरह से दास्य-विमोचन के लिए व्याकुल उमड़ते हुए जनमानस की स्थिति की जांच करने के लिए शासकों ने राजकुमार (प्रिंस आफ वेल्स) को भारत भेजा—

जनमानसमुत्तरङ्गितं
नितरां दास्यविमोचनाकुलम् ।
परिमातुमिवाधिशासकैः
प्रहितो राजसुतोऽथ भारतम् ॥[3]

उस समय नेहरू जी का आनन्द भवन जनता के आन्दोलन का सङ्गम स्थल हो गया था। यहाँ असंख्य पुरुषों द्वारा राष्ट्र-विमोचन के व्रत का वरण किया गया—

नहरू-भवनं तदाभवज्-
जनतान्दोलन-सङ्गमस्थलम् ।
विपुलैर्व्रियते स्म यत्र वै
मनुजै राष्ट्रविमोचनव्रतम् ॥[4]

---

१. नेहरू-यशः-सौरभम् ५.३ ।
२. वही, ५.४ ।
३. वही, ५.७ ।
४. वही, ५.६ ।

पिता के साथ जवाहरलाल को भी शासकों ने दण्ड-गृह का अतिथि बना दिया। कलुषित आत्मा वालों की यह प्रकृति है कि वह समभावना को भी वक्र चेष्टा से देखते हैं—

जनकेन समं जवाहरं
कुटिला बन्दिगृहेऽप्यवेशयन् ।
प्रकृतिः कलुषात्मनामहो
सरलं पश्यति वक्र-चेष्टया ॥[1]

प्रतिकार में संलग्न, विशाल जागरित राष्ट्र के नवोदय से युक्त जनता के हृदय में युवराज का आगमन जलती हुई अग्नि में घी के समान हुआ—

जनहृदि प्रतिकार-परायणे
सुपरिकल्पित-राष्ट्रनवोदये ।
समभवद् युवराज-समागमो
घृतमिव ज्वलिते दहने तदा ॥[2]

१९३७ ई० में नेहरू राष्ट्रसभाध्यक्ष नियुक्त हुए ।[3]

१९४२ ई०[4] में अगस्त मास में गांधि जी ने अंग्रेजों को उद्दिष्ट कर 'भारत छोड़ो' का नारा घोषित किया। इससे क्रुद्ध अंग्रेजों ने समस्त नेताओं को बन्दी बना लिया। जवाहरलाल भी बन्दी बना लिया गया। जवाहरलाल आदि नेताओं को अहमदपुर के किले में रखा गया—

क्रुद्धा गौरा निरोधार्थं नेतॄणां प्रस्तुता मुहुः ।
प्रियो जवाहरोऽप्यत्र बद्धोंऽग्रेजैरतिद्रुहैः ॥
अहमदाख्ये पुरे दुर्गेऽज्ञातो भारत-मानवैः ।
ध्यानेन चिन्तयामासोपयोगः समयस्य वै ॥[5]

द्वितीय युद्ध के अन्त में सभी भारतीय बन्दी छोड़ दिए गए, तब गोरों की

---

१. नेहरू-यशः-सौरभम् ५।१०।

२. वही०, ५।१४।

३. जवाहर-चिन्तनम्, पूर्व-जवाहर, गीत २३।

४. वही०

५. जवाहर-जीवनम्, श्लोक ३०२-३०३।

स्थिति भयानक और कांग्रेस के आन्दोलन से डांवाडोल थी—

द्वितीयसंगरस्यान्ते मुक्ताः सर्वे हि वन्दिनः ।
तदा स्थितिरियं जाता गौरांगाणां भयावहा ।।
अकल्पाः शासने जाता विवशा राज्यकारिणः ।
आन्दोलनेन लोकानां गौराणां स्थितिर्निर्बला ।।[1]

तभी भारतीयों ने पूर्ण स्वतन्त्रता की मांग पर बल दिया और यह घोषणा की कि साम्राज्यवादियों ! अब हम तुम्हारे अत्याचारों को सहन नहीं करेंगे । स्वाधीनता मानव का जन्मसिद्ध अधिकार है, भारत भी केवल यही चाहता है, अतः इसे न्यायोचित स्वराज्य दे दो—

इदानीं न सहिष्यामो दुराचारान्नराधमान् ।
कटिबद्धैःस्वदेशीयैरुक्ताः साम्राज्य-वादिनः ।।
जन्मसिद्धोऽधिकारो वै स्वाधीनाः स्यु सदा नराः ।
भारतस्य तदेवेष्टं नान्यद् न्याय्यं हि दीयताम् ।।[2]

सुभाष ने जापान तथा जर्मनी की सक्रिय सहायता प्राप्त की और बिना ही धन-धान्य आदि समुचित साधनों के अपूर्व शुभ लक्षणों वाली भारत-सेविका आजाद-हिन्द-सेना बनाई—

सुभाषो युद्ध-संकल्पः कटिबद्धः स्वकर्मणि ।
साहाय्यं सक्रियं लेभे जापानं-जर्मनोद्भवम् ।।
आजाद-हिन्द-सेनां तु कृत्वा भारत-सेविकाम् ।
धनधान्य-विनोद्भूतामभूता शुभलक्षणैः ।।[3]

इन सतत प्रयासों से अंग्रेजों का शासन डगमगाने लगा । ऐसी स्थिति में उन्होंने सन्धि का विचार किया और संधि के लिए उन्हें (नेहरू को) ही स्वभावतः धीर होने पर भी अधीर से वायसराय ने बुलाया । उनके शान्ति-प्रिय तथा मधुर वचनों से अंग्रेज शासकों का प्रमुख वह प्रसन्न हुआ—

---

१. जवाहर-जीवनम्, श्लोक ३०८-३०९ ।

२. वही, श्लोक ३१०-३१२ ।

३. वही, श्लोक ३१५-३१६ ।

सन्धिं विधातुममुमेव समाजुहाव
धीरोऽप्यधीर इव वायसराय एवम्।
शान्तिप्रियैश्च मधुरैर्वचनैश्च तस्य
गौराङ्ग-शासक-गुरुर्मुदितो बभूव ॥[1]

इस प्रकार स्वातन्त्र्य युद्ध शान्त हो गया और अंग्रेजों का शासन भी शान्त हो गया। सुरुचिसम्पन्न लार्ड-माउन्ट-बेटन सफलता प्राप्त कराने वाले हुए—

युद्धं शान्तं बभूवेत्थं शान्तं गौराङ्गशासनम्।
श्रीलः 'श्रीलार्डमाउण्ट-बेटनः' सिद्धिदोऽभवत् ॥[2]

१४-८-१९४७ की मध्य रात्रि में भारतीयों को स्वतन्त्रता प्राप्त हुई। घण-घण करते घण्टे बज उठे, स्वतन्त्रता का तोष उदित हुआ, परतन्त्रता की शृङ्खला तोड़ दी गई तथा स्वराज्य की देहली को आक्रान्त कर लिया—

घणघणघण्टा निशि निनादिता, स्वतन्त्रतोषा इयमुदिता।
पारतन्त्र्यशृङ्खला छेदिता, स्वराज्यदेहलिराक्रान्ता ॥[3]

नेहरू जी स्वतन्त्र भारत के प्रथम प्रधान मन्त्री हुए। किन्तु स्वतन्त्रता-प्राप्ति के समय एक कठिनाई आ पड़ी—हिन्दू-मुस्लिम भेद से अकाण्ड में ही लंकाकाण्ड हो गया—

परं काठिन्यमायातं काले स्वाधीनतात्मके।
लंका-काण्डस्त्वकाण्डेऽभूत् हिन्दू-मुस्लिम-भेदतः ॥[4]

दुर्जन अति नीच जिन्ना ने मांगा 'पाकिस्तान' जिसके परिणाम स्वरूप भारत का विभाजन कर दिया गया—

दुर्जनेनातिनीचेन जिन्नारूपेण याचितः।
पाकिस्तान पृथक् भागो भारतस्य कृतस्तदा ॥[5]

---

१. श्रीनेहरू-चरितम्, १४।४३।
२. वही, १४।३४।
३. जवाहर-चिन्तनम्, पूर्व-जवाहर, गीत ३३।
४. जवाहर-जीवनम्, श्लोक ३३५।
५. वही०, राष्ट्रशोक, श्लोक ३३७।

विवश नेताओं को विभाजन स्वीकार करना पड़ा—

विवशैर्भारतीयैर्वै स्वीकृतं देशखण्डनम् ।
गान्धि-जवाहराधारैः श्रीराजेन्द्रैः पटेलकैः ॥[1]

अर्थात् विवश होकर गांधि, जवाहर, राजेन्द्र तथा पटेल आदि ने भारत का विभाजन स्वीकार कर लिया ।

जब अपने देश में जनमुक्ति के लिए चारों ओर से नेता संलग्न थे तभी 'मुस्लिम लीग' नाम का दल, धर्म-विरोध में वृद्धि करने में व्यस्त था—

यदा स्वदेशे जनमुक्तिहेतो-
र्नेतार आसन् परितो निमग्नाः ।
आसीत् तदा धर्म-विरोध-वृद्धि-
व्यस्तं दलं 'मुस्लिम-लीग' नाम ॥[2]

(ग) स्वतन्त्र भारत की प्रमुख घटनाएं—

नेहरू चरित्र के रचयिताओं ने स्वतन्त्र भारत की प्रमुख घटनाओं के यथार्थ चित्र खींचे हैं । नेहरू काल की घटनाओं का विस्तार से तथा उनके दिवङ्गत हो जाने के बाद की घटनाओं का भी संक्षेप से उन्होंने वर्णन किया है ।

१५ अगस्त १९४७ में स्वतन्त्रता की घोषणा हुई । स्वतन्त्रता की घोषणा के पश्चात् १५ अगस्त १९४७ को स्वतन्त्र भारत में शपथ ग्रहण करने के बाद नेहरू ने कहा—

रथाङ्गनेमिरिव नियतेः
उपरिदशामधुना लभते
दास्यशृङ्खला बलात् खण्डिता
भारतवसुधा मुकुटमण्डिता
मन्त्रघोषणे रताः पण्डिताः
ध्वज उच्चैर्नो नित्यमेजतां
जनगणगीतं सदा गीयतां
राष्ट्रे निष्ठा हृदये ध्रियतां
भारतेषु जनते ॥[3]

---

१. जवाहर-जीवनम्, श्लोक ३३८ ।

२. नेहरू-यशः-सौरभम्, ८।१० ।

३. जवाहर-चिन्तनम्, उत्तर-जवाहर, गीत ३४ ।

अर्थात् नियति के रथ के पहिए का यह चक्का अब ऊपर आ गया है, दासता की शृङ्खला बलपूर्वक तोड़ दी गई है, पण्डित मन्त्रों का उद्घोष करने में उद्यत हैं। हमारा राष्ट्र ध्वज नित्य ही ऊपर उठता जाए, जन-गण-मन इत्यादि राष्ट्र गीत सदा गाया जाए। हे भारत की जनता! राष्ट्र के लिए निष्ठा हृदय में धारण की जाए।

नेहरू ने नूतन प्रजातन्त्र के मार्ग दर्शक भव्य तथा उदारदर्शी संविधान का निर्माण करवाया।[1] उन्होंने २६-१-१९५० को सार्वभौम प्रजासत्तात्मक राष्ट्र की घोषणा की—

प्रजासत्ता प्रतिज्ञाता प्रयत्नैरद्य सा प्राप्ता।
जनानां धर्मवर्णानां समाना मान्यता दीप्ता॥[2]

अर्थात् जिस प्रजातन्त्र का वचन दिया गया था आज वह प्रयत्नों से प्राप्त हो गया है। सभी लोगों, धर्मों और वर्णों की समानता प्रकाशित हो रही है।

नेहरू ने लोक-निर्वाचन-शासन-क्रिया को पाँच सभाओं में बांट दिया।[3]

संसार को मत्स्य नीति से प्रभावित देखकर बादुङ्ग सम्मेलन में पहुँच कर नेहरू ने लोगों को सह अस्तित्व की श्रेष्ठ भावना का उपदेश दिया—

विलोकयन् मत्स्य-नय-प्रभावितान्
समस्तराष्ट्रान् भुवने नवोदितान्।
समेत्य बादुङ्ग-सभामुपादिशज्-
जनान् सहास्तित्व-सुभावनामसौ॥[4]

नेहरू ने वर्ग विशेष में बंधे देशों को देखकर गुट-निरपेक्षता की नीति निश्चित की[5] तथा राष्ट्र संघ की सदस्यता ग्रहण की[6]। लोक कल्याण के

---

१. नेहरू-यशः-सौरभम्, ९।५।
२. जवाहर-चिन्तनम्, उत्तर-जवाहर, गीत ४३।
३. नेहरू-यशः-सौरभम्, ९।६।
४. वही, ९।७।
५. वही, ९।८।
६. वही, ९।१०।

लिए उन्होंने समानता की भावना को पुष्ट किया—

स जातिवर्गाग्रहमुक्तमुन्नतं प्रशासनं लोकहिताय संसदौ ।
समाजसंकल्पित-साम्य-भावनां पुपोष कुर्वन् दलिते दयामसौ ।।[1]

३०-१-४८ को[2] अकस्मात् महात्मा गांधि का निधन हो गया। इससे नेहरू को बहुत दुःख हुआ। और उन्होंने भाव-भीनी श्रद्धांजलि अर्पित की—

स्तोत्रे न समर्थाः
महात्मतायै शब्दा व्यर्थाः
सरस्वतीयं प्रयतते वृथा
न शब्दकोशा अर्थवाहकाः
गर्जन्तः स्तनितैर्बलाहकाः
तैर्न गीयते विद्युल्लेखा
विरचिता तु गाथा
अस्तमिता भुवनैकसत्कथा ।
कथं खलु स्यादस्तंगमनं
म्लाने कमले ननु न विलयनं
परिणमते न परिमलहानं
कीर्तिरथानाथा
विफलप्रस्था स्मारकसंस्था
हृदये हृदये यस्य निवसनं
दिवसे दिवसे यस्य चिन्तनं
पदे पदे यदि तत्स्मृतिचिह्नं
कुतः स्यादनास्था
कण्टकास्तृतो न इतः पन्थाः
तथापि न प्रभवेद् दुरिततमः
रवेर्मज्जने संध्यानियमः
नापि संभवेद दिशां संभ्रमः
दीप्तिरियमवितथा

१. नेहरू-यशःसौरभम्, ८।१० ।

२. जवाहर-चिन्तनम्, उत्तर-जवाहर, गीत ३५ ।

न बलस्तूपाः संप्रति सार्थाः।
चरित्वा त्वहिंसासोपानं
स्मृतिचैत्ये नो विहारवसनं
जनकल्याणं स्यान्निर्वाणं
जीविकास्तु सार्था।[1]

अर्थात् महात्मा (गान्धि) के स्तोत्र में असमर्थ ये शब्द व्यर्थ हैं। यह सरस्वती व्यर्थ ही प्रयत्न कर रही है, शब्दकोष ही अर्थवाहक नहीं रहे। जिस प्रकार बिजली की कड़क से बादल गरजते हैं किन्तु उनके द्वारा विद्युत् लेखा का गायन नहीं किया जाता उसी प्रकार मैंने भी केवल इस महात्मा गान्धि की कथा की रचना कर दी है किन्तु उसे गा नहीं पाया।

भुवन की एक सत्कथा अस्त हो गयी है, परन्तु अस्त होना कैसे हो सकता है, कमल के मुरझाने पर उसका विलय नहीं हो जाता क्योंकि सुगन्ध की समाप्ति नहीं होती।

अब तो कीर्ति भी अनाथ हो गई है, स्मारक रूपी संस्था निष्फल है। हृदय-हृदय में जिसका निवास है, प्रतिदिन जिसका चिन्तन है, पद-पद पर यदि चिह्न है तो अनास्था कहाँ से होगी।

इससे आगे हमारा मार्ग काँटों से भरा है। परन्तु फिर भी यह प्रकाश इतना वास्तविक है कि कष्ट रूपी अन्धकार समर्थ नहीं हो सकता। सूर्यास्त होने पर संध्या का नियम है और संध्या में भी प्रकाश रहता है अतः दिग्भ्रान्ति सम्भव नहीं।

अहिंसा के सोपानों पर चढ़कर अब बल के स्तूप भी हमारे लिए सार्थक नहीं हैं। स्मृति रूपी चैत्य में हमारा विहार होगा और जन कल्याण ही हमारा निर्वाण होगा। इस प्रकार हमारा जीवन सार्थक हो।

नेहरू जी ने गांधि जी के मार्ग का अनुसरण करते हुए देश को प्रगति के मार्ग की ओर अग्रसर किया। वे रूढ़ि विरोधी थे एवं विज्ञान को उन्नति का कारण मानते थे। उन्होंने पुराणनूतन के समन्वय पर बल देते हुए २२-४-५० को कहा कि पुरातन सब ठीक नहीं होता। नया भी सुन्दर एवं

---

१. जवाहर-चिन्तनम्, उत्तर-जवाहर, गीत ३६।

निपुण होता है—

साधु न सर्वं भवति पुराणं नवमपि नूनं रुचिरं निपुणम् ।[1]

नेहरू ने सिंचाई, खेती एवं बाँध आदि के लिए भरसक वैज्ञानिक पद्धतियों को अपनाया।

जल-समूहों को बाँध बनाकर रोक दिया। इस प्रकार वे न केवल कृषि-सिंचाई में समर्थ हुए अपितु बिजली भी उत्पन्न करने लगे।

नगरों में व्यापार, शिक्षा, कर, रेल, खेती, डाकखाना, नल, सेना तथा बिजली उपलब्ध कराई। नेहरू जी की औद्योगीकरण की नीति भी प्रशंसनीय हैं। नेहरू ने प्रजा की सुविधा के लिए अनेकों लोहा आदि के कारखाने बनवाए—

त्वयाऽयसां भूरिविधा मृदां तथा कार्यालया रम्यतरा विचक्रिरे ।
अनन्तवस्तूनि भवन्ति यत्र वै प्रजाजनानामुपकृन्ति सन्ति च ।।
कार्यालयानां निकरेषु मुख्यतामुपैति ते सूरतपत्तनोद्भवः ।
नदीषु बह्वीष्वपि भाखड़ाभिधो विराजते नांगलबंधसम्भवः ।।[2]

अर्थात् तुम्हारे द्वारा बहुत अधिक विज्ञान से युक्त लोहे के तथा मिट्टी के (सीमेंट इत्यादि) बहुत सुन्दर कारखाने बनाए गए । इनमें प्रजाओं के लिए उपकारक अनन्त वस्तुएं निर्मित होती हैं। कारखानों के उन समूहों में सूरत नगरी में बना हुआ कारखाना सबसे मुख्य है। इसी प्रकार बहुत सी नदियों पर बने हुए बाँधों में नंगल बांध का उत्पत्ति स्थान बना हुआ भाखड़ा बांध मुख्य है।

नेहरू जी ने विज्ञान-भवन, सुप्रीम-कोर्ट, अशोक-होटल जैसे भव्य भवन बनवाए।[3] उन्होंने अंग्रेजों के चैत्यों (मूर्तियों) को हटाकर भारतीय महापुरुषों के चैत्य स्थापित किए।[4] नेहरू जी ने तटस्थता की नीति पर चलकर राष्ट्र की उन्नति की।[5] उन्होंने कुटीर उद्योगों पर बल दिया—

---

१. वही; गीत ६।
२. गान्धिबान्धवम्, ४२।
३. वही.
४. वही.
५. श्री नेहरू-चरितम्, १५।३५।

कुटीरोद्यमाः शकटसमाना
ग्रामे-ग्रामे वर्धन्ताम् ।
अण्वग्निगृहं विमानकल्पं
शक्ति जनयत्वपरिमिताम् ।।[1]

अर्थात् गाँव-गाँव में कुटीर-उद्योग बैल-गाड़ी के समान निरन्तर बढ़ते रहें। अणु-भट्टी विमान के समान तीव्रगति से अपरिमित शक्ति उत्पन्न करे।

प्रधानमन्त्री श्रीजवाहरलाल के नेतृत्व में भारत ऋद्ध, पूज्य, सुसन्तुष्ट, हृष्ट-पुष्ट, प्रसन्न संसार में लब्धादर, संसार में पूर्ण-गौरव, विद्या-बुद्धि के प्रसाद से शस्त्रास्त्रों से पूरित, दृढ़, नवीन-प्राचीन-पण्डित-मण्डित, धन-धान्य-समाकीर्ण, सर्वरीति-नीति-उत्तीर्ण, तटस्थ, विश्वनेता, एशिया का मार्ग-दर्शक, सदा आसुरी भावों का निन्दक, अनेक युद्ध-निरोधी, पाप-विरोधी, विदेशियों तथा स्वदेशियों द्वारा उत्पन्न की गयी पृथक्, पृथक् विविध उनन्त समस्याओं का अनेक बार शान्त-शील स्वभाव से सुसमाधान-कारक, सर्व-हितैषी, सर्वोदय-प्रचारक, पंचशील योजना से विश्व-वैभव-कारक बन गया—

ऋद्धो वृद्धः सुसन्तुष्टो हृष्टः पुष्टो मुदान्वितः।
लब्धादरो हि संसारे संचारे पूर्ण-गौरवः ।।
विद्या-बुद्धि-प्रसादेन शस्त्रास्त्रैः पूरितो दृढः।
मण्डितः पण्डितैर्विज्ञैरर्वाचीनैः पुरातनैः ।।
धन-धान्य-समाकीर्ण उत्तीर्णो रीति-नीतिषु।
तटस्थः सर्व-नेता च सर्वदाऽसुरनिन्दकः ।।
अनेक-युद्ध-संरोधो विरोधः पापकारिषु।
समस्यानामनन्तानां विविधानां पृथक्-पृथक् ।।
कारितानां विदेशीयैः स्वदेशीयैरनेकशः।
शान्त-शील-स्वभावेन सुसमाधान-कारकः ।।
सर्वेषां हितमन्विच्छन् सर्वोदय-प्रचारकः।
पंचशील-प्रयोगेन विश्व-वैभव-कारकः ।।[2]

---

१. जवाहर-चिन्तनम्, उत्तर-जवाहरः, गीत ५५।
२. जवाहर-जीवनम्, प्रधान-मन्त्रित्वम्, श्लोक ३२९-३३४।

इस प्रकार प्रधानमन्त्री श्रीजवाहरलाल के नेतृत्व में भारत ने सर्वाङ्गीण उन्नति की।

१९६४ में श्री नेहरू जी का स्वर्गवास होना एक हृदय दहलाने वाली घटना है। समस्त विश्व में श्रद्धा से झुके हुए विभिन्न राष्ट्रों के ध्वज, दिशाओं में कम्पित होते हुए मानो पृथ्वी के जन-मानस के शोक को संकेत शब्दों से सूचित कर रहे थे—

श्रद्धानता दिक्षु विकम्पमाना
राष्ट्रध्वजा विश्वगता इवासन्।
संकेतशब्दैर्दिवि सूचयन्तः
शोकं धरित्रीजनमानसानाम्॥[1]

उसके पश्चात् लालबहादुर शास्त्री प्रधान-मन्त्री हुए। युद्ध में विजित, उद्धत पाक-देश से सन्धि करने के लिए, सुजनों के साथ **'ताशकन्द'** में जाकर, संसार में कीर्ति को फैलाते हुए **'लालबहादुर शास्त्री'** भी हृदय-गति रुक जाने के कारण, दुर्भाग्यवश निधन को प्राप्त हो गए—

युद्धे जितं ननु समुद्धत-पाकदेशं
सन्धातुमेत्य सुजनैः सह 'ताशकन्दे'।
दैवादवाप निधनं हृदयावरोधात्
कीर्ति किरन् जगति 'लालबहादुरो'ऽपि॥[2]

(शास्त्री जी के निधन के बाद) लोकसभा के सदस्यों ने राष्ट्र को सहसा चारों ओर से असहाय देखकर, चरित्र और गुणों से भूषित श्रीमती **'इन्दिरा गान्धी'** को प्रधानमन्त्री के पद से अलंकृत कर दिया—

राष्ट्रं विलोक्य परितः सहसाऽसहायं
तामिन्दिरां सपदि लोकसभा-सदस्याः।
चक्रुश्चरित्रगुण-भूषण-भूषिताङ्गीं
मन्त्रि-प्रधान-पदवी-परिमण्डितां ते॥[3]

---

१. नेहरू-यशः-सौरभम्, ११।२९।

२. वही, १२।३।

३. वही, १२।५।

उन्होंने (इन्दिरा ने) भारत की भाग्यलक्ष्मी को, लोक-कल्याण तथा अपने पद की प्रतिष्ठा को भी संसार में फैलाते हुए, विकास की गति को सार्थक करने के लिए, राष्ट्र के प्रशासन पथ को सुदृढ़ कर दिया—

सा लोकमङ्गलमथ स्वपद-प्रतिष्ठा-
मातन्वती जगति भारत-भाग्य-लक्ष्मीः ।
सम्यग् विकासगतिमर्थवतीं विधातुं
राष्ट्र-प्रशासन-पथं सुदृढी चकार ॥[1]

व्यापारिक बैंकों को (राज्य के) अधिकार में करके, सामान्य जीवन के कल्याण के लिए जनता को समर्पित करती हुई, क्रान्ति के प्रसार की मन में कल्पना करने वाली श्रीमती इन्दिरा गान्धी का यह पहला अभियान लोक द्वारा प्रशंसित हुआ—

व्यापार-कोषमधिकृत्य समर्पयन्त्याः
सामान्य-जीवन-हिताय जनाय तस्याः ।
क्रान्ति-प्रसार-परिकल्पित-मानसाया
लोकप्रशंसितमभूत् प्रथमाभियानम् ॥[2]

उन्होंने (इन्दिरा ने) पाञ्चाल-पुत्री (द्रौपदी) के समान, बंग-भूमि को दुःशासन (बुरे शासन) से शीघ्र मुक्त करके, बङ्ग-बन्धु (मुजीब) की विजय के द्वारा द्वीप में पुनः शान्ति स्थापित करने का प्रयास किया—

पाञ्चाल-पुत्रीमिव बंग-भूमि
दुःशासनादाशु विधाय मुक्ताम् ।
सा बङ्ग-बन्धोर्विजयेन शान्तिं
द्वीपे पुनः स्थापयितुं प्रयेते ॥[3]

एक ओर इन्दिरा ने बंगला देश की सहायता की, दूसरी ओर पाक-भूमि के सन्ताप की भी शान्ति कर दी—

अङ्के महीधरपतेर्हिमशीकरार्द्रे
सन्धि विधाय सदया शिमला-नगर्याम् ।

---

१. नेहरू-यशः-सौरभम्, १२।६ ।
२. वही, १२।७ ।
३. वही, १२।५३ ।

सन्ताप-शान्तिमकरोन्ननु पाकभूमेः
कौतूहल-प्रशमनं च धराधिपानाम् ।।[1]

अर्थात् हिम-शीकरों से आर्द्र, हिमालय की गोद में (बसी) शिमला नगरी में सन्धि करके उस दयावती ने, पाक-भूमि के सन्ताप को शान्त कर, तथा विश्व के प्रशासकों के कौतूहल को भी शान्त कर दिया।

इसके अतिरिक्त अणुविस्फोट[2] आदि प्रशंसनीय कार्य भी उसने किए। आज भी वे निरन्तर कार्य-संलग्न हैं।

१. नेहरू-यशः-सौरभम् १२।५७।
२. वही १२।६५।

३

नेहरू-विषयक संस्कृत-वाङ्मय में नेहरू-चरित्र

पं० नेहरू-विषयक संस्कृत वाङ्मय में प्रशस्ति-मात्र-साहित्य को छोड़ दें तो शेष सभी ग्रन्थों में उनके जीवन-चरित्र एवं गुणों पर पर्याप्त प्रकाश पड़ता है।

पं० नेहरू का जन्म कश्मीरी कौलवंश[1] के नेहरू-घराने में, प्रयाग नगर में, १४ नवम्बर १८८९ को हुआ था।[2] उस समय कर्क लग्न था, और सूर्य, चन्द्र, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु और केतु क्रमशः पंचम, प्रथम, तृतीय, चतुर्थ, षष्ठ, चतुर्थ, द्वितीय, द्वादश और षष्ठ भाव में थे।[3] इनके पिता का नाम मोतीलाल नेहरू और धार्मिक प्रवृत्ति वाली माता का नाम स्वरूपरानी था। इनकी दो छोटी बहिनें विजयलक्ष्मी एवं कृष्णा थीं। इनका शैशव राजप्रासाद सदृश आनन्द-भवन में बीता।[4] इन्हें पढ़ाने के लिए घर पर ही अनेक अंग्रेज अध्यापक एवं अध्यापिकाएं आते थे। किन्तु इन पर सबसे अधिक प्रभाव आइरिश अध्यापक 'फर्डिनण्ड टी० ब्रुक्स'[5] का पड़ा। १९०५ में नेहरू जी अध्ययनार्थ इंग्लैण्ड चले गए, वहाँ 'हैरो' स्कूल में स्कूली शिक्षा एवं 'केम्ब्रिज विश्वविद्यालय' से स्नातक परीक्षा के उपरान्त वकील बनकर ये भारत लौट आए और यहाँ 'बैरिस्टर' के पद पर कार्य करने लगे।[6]

१९१६ ई० में पिता की आज्ञानुसार इन्होंने कमला कौल नामक अति सुन्दर कन्या से विवाह किया। विवाहोपरान्त भ्रमणार्थ कश्मीर गए। इनकी एक पुत्री हुई—इन्दिरा प्रियदर्शिनी।[7] १९२१ में नेहरू ने महात्मा गांधी द्वारा प्रदर्शित

१. जवाहर-जीवनम्, श्रीनेहरूचरितम् इत्यादि।
२. जवाहर-चिन्तनम्, नेहरू-यशः-सौरभम् इत्यादि।
३. नेहरू-यशः-सौरभम्।
४. जवाहर-जीवनम्, नेहरू-यशः-सौरभम् इत्यादि।
५. गीत-जवाहरम्।
६. जवाहर-जीवनम्, श्रीनेहरूचरितम् इत्यादि।
७. नेहरू-यशः-सौरभम् इत्यादि।

'असहकार' आन्दोलन स्वीकार कर लिया ।[1] इसके बाद ये राजनीति में सक्रिय भाग लेने लगे ।

'जवाहर-जीवनम्' के अन्त में कवि ने 'ग्रन्थसार' में नेहरू जी के जीवन की प्रमुख घटनाओं का क्रमशः उल्लेख किया है । 'नेहरू-सूत्राणि' के अन्त में 'नेहरूवर्षानुक्रमणिका' दी हुई है । इसमें प्रतिवर्ष की घटनाओं का उल्लेख है—

१८८९—प्रयाग में जन्म ।

१९०५—अध्ययन के लिए विदेश-गमन ।

१९१२—बैरिस्टर बन कर स्वदेश लौटे ।

१९१३—कांग्रेस में प्रवेश ।

१९१५—समाचार-पत्रों पर सरकारी प्रतिबन्ध के विरोध में प्रयाग में सर्वप्रथम भाषण ।

१९१६—कमला जी से विवाह तथा लखनऊ कांग्रेस-अधिवेशन में गांधी जी से प्रथम साक्षात्कार ।

१९१७—होम-रूल आन्दोलन में भाग लिया, इन्दिरा का जन्म ।

१९१८—अखिल भारतीय कांग्रेस-समिति के सदस्य ।

१९२१—प्रिंस ऑफ वेल्ज़ का भारत में विरोध तथा कारावास ।

१९२२—मार्च में रिहा, पर मई में विदेशी वस्त्र का विरोध करने पर पुनः जेल-यात्रा ।

१९२३—जून ३१-रिहा; सितम्बर २२-नाभा में पुनः गिरफ्तार, अक्टूबर ४-रिहा; कोकोनाडा कांग्रेस के जनरल सेक्रेटरी ।

१९२६—कमला जी की चिकित्सा के लिए स्विटज़रलैंड रवाना ।

१९२७—ब्रुसेल्ज़ कान्फ्रेन्स में भारत के प्रतिनिधि ।

१९२९—लाहौर अधिवेशन के अध्यक्ष । पूर्ण स्वराज्य की उद्घोषणा ।

१९३०—नमक सत्याग्रह में भाग लिया ।

१९३१—पिता का देहावसान ।

---

१. जवाहर-चिन्तनम्, पूर्वजवाहरः ।

१९३४—जेल-यात्रा। **'विश्व-इतिहास की झलक'** नामक ग्रन्थ का प्रकाशित होना।

१९३५—अलमोड़ा कारावास में **'आत्मकथा'** की पूर्ति।

१९३६—कमला जी का देहान्त। अप्रैल में लखनऊ-अधिवेशन के तथा दिसम्बर में फ़ैज़पुर-अधिवेशन के अध्यक्ष।

१९३८—माता का देहान्त। राष्ट्रीय-योजना-समिति के अध्यक्ष। स्पेन-यात्रा।

१९३९—चीन-यात्रा।

१९४०—सत्याग्रह में भाग लिया तथा जेल-यात्रा।

१९४१—रिहाई।

१९४२—च्यांगकाई शेक तथा क्रिप्स मिशन से बातचीत। **'भारत छोड़ो'** आन्दोलन में गिरफ्तारी।

१९४५—शिमला-कान्फ्रेंस में सम्मिलित। आज़ाद-हिन्द-सेना के अधिकारियों का संगठन।

१९४६—**'भारत की खोज'** का प्रकाशन। दक्षिण-पूर्वी एशिया की यात्रा। कांग्रेस के अध्यक्ष। अन्तरिम सरकार के लिए निमन्त्रण स्वीकार किया। **'कैबिनेट मिशन प्लान'** के सम्बन्ध में लन्दन यात्रा।

१९४७—एशियाई कान्फ्रेंस का नई दिल्ली में उद्घाटन। स्वातन्त्र्य प्राप्ति।

१९४८—राष्ट्रमण्डलीय प्रधान मन्त्रियों के सम्मेलन में भाग। पैरिस में संयुक्त राष्ट्र संघ की जनरल असेम्बली में भाषण।

१९४९—डच आक्रमण के विरुद्ध इंडोनेशिया में एशियाई देशों की कान्फ्रेंस का उद्घाटन। राजकीय निमन्त्रण पर अमरीका की यात्रा।

१९५०—योजना आयोग के अध्यक्ष। नेहरू-लियाकत समझौता। पाकिस्तान यात्रा। कोरिया में युद्ध का अन्त करने के लिए अपील।

१९५१—क़ाहिरा, जनेवा, लन्दन, नेपाल की यात्रा। दिल्ली कांग्रेसाधिवेशन के अध्यक्ष।

१९५३—हैदराबाद कांग्रेसाधिवेशन के अध्यक्ष। पाकिस्तान की पुनः यात्रा।

१९५४—श्रीलंका का दौरा । चाऊ-एन-लाई से मुलाकात ।

१९५५—राष्ट्रमण्डलीय प्रधान-मन्त्री सम्मेलन में भाग लिया । अनेक अन्तर्राष्ट्रीय नेताओं से बातचीत । 'भारत-रत्न' से सम्मानित ।

१९५६—ब्रिटेन, अमेरिका तथा फ्रांस के विदेश-मन्त्रियों तथा रूस के प्रथम उप-प्रधान मन्त्री से बातचीत । राष्ट्र मण्डलीय प्रधान मन्त्रियों के सम्मेलन में । चाऊ से दिल्ली में वार्ता । अमेरिका, कैनाडा और यूरोप की यात्रा । जनरल असेम्बली में भाषण ।

१९५७—ट्राम्बे में एशिया के पहले रिएक्टर का उद्घाटन । राष्ट्र-मण्डलीय प्रधान-मन्त्री कान्फ्रेंस में भाग । हालैंड, मिस्र, सूडान, जापान की यात्रा । नई दिल्ली में राष्ट्र-मण्डल की पार्लियामेंटरी कान्फ्रेंस में भाषण ।

१९५८—चेकोस्लाविया के प्रधानमन्त्री तथा इंडोनेशिया के राष्ट्रपति सुकर्ण से बातचीत । प्रधानमन्त्री पद से त्याग-पत्र देने की इच्छा प्रकट की । भूटान-यात्रा ।

१९५९—जर्मनी के प्रधानमन्त्री तथा युगोस्लाविया के राष्ट्रपति से बातचीत । अफ़गानिस्तान के प्रधान मन्त्री के साथ बातचीत । मसूरी में दलाई-लामा से भेंट । नेपाल-यात्रा । अयूब खाँ से बातचीत । अफ़गानिस्तान का दौरा । बर्मा के प्रधानमन्त्री से मुलाकात ।

१९६०—चाऊ से मुलाकात । राष्ट्रमण्डलीय प्रधानमन्त्री कान्फ्रेंस में भाग । पैरिस, मिस्र, टर्की तथा लेबनान की यात्रा । शिखर-सम्मेलन में सम्मिलित । महाराष्ट्र और गुजरात का उद्घाटन । अयूब खाँ से बातचीत । जनरल असेम्बली में भाषण ।

१९६१—बम्बई में कैनाडा और भारत के न्यूक्लीयर रिएक्टर का उद्घाटन । महाराजा भूटान से बातचीत । राष्ट्रमण्डल के प्रधान-मन्त्री-सम्मेलन में सम्मिलित । शिखर-सम्मेलन में भाग । एशियाई आन्दोलन की पहली कांग्रेस का उद्घाटन । रूसी राष्ट्रपति ब्रेज़नेव से भेंट ।

१९६२—भारतीय साइंस कांग्रेस का उद्घाटन । राष्ट्रीय एकता कौंसिल की बैठक की अध्यक्षता । राष्ट्रमण्डल प्रधान-मन्त्री-सम्मेलन में भाग । चीनी आक्रमण के विरुद्ध राष्ट्रीय एकता की अपील ।

१९६३—कोलम्बो प्रस्ताव पर बातचीत । भाखड़ा बाँध का उद्घाटन ।

१९६४—महाप्रयाण ।

कृष्णदत्त भारद्वाज का यह स्तुत्य प्रयास है।

'जवाहर-जीवनम्' की अपेक्षा इसके द्वारा नेहरूजी के जीवन की एक दृष्टि में झलक अधिक विशदतापूर्वक एवं सुविधापूर्वक प्राप्त होती है।

नेहरू जी की रुचियाँ

नेहरू जी को व्यायाम बहुत प्रिय था । शीर्षासन में इन्होंने विशेष रुचि प्रदर्शित की, अत्यन्त सुन्दर क्रीडाओं में कुशलता प्राप्त की, कभी घुड़सवारी का आनन्द लिया और कभी नौका विहार किया—

शीर्षासने बहुरुचिं नितरां बबन्ध
क्रीडासु चातिरुचिरासु गतिं प्रपेदे ।
अश्वाधिरोहणसुखञ्च कदापि लेभे
नौकाविहारमकरोच्च कदाचिदेव ॥[1]

तैरना एवं शिकार इन्हें बहुत प्रिय था। स्वाध्याय उनका विशेष शौक था। वे सौन्दर्योपासक थे। सभी तरह के खेल उन्हें बहुत रुचिकर थे—**'क्रीडासु सार्वभौमता'**[2] नेहरू जी की खादी ग्रामोद्योग में विशेष रुचि थी—

'खादीग्रामोद्योगाभ्याम् अभिरुचिः'[3] एवं वे पाटल प्रिय थे—**'कुरबकरुचि-र्भरतसूनुरमूल्यरत्नम्** ।

नेहरू जी का व्यक्तित्व

नेहरूविषयक इस वाङ्मय का उद्देश्य तो नेहरू के आदर्श चरित्र को चित्रित करना है । इस उद्देश्य में प्रायः कवि सफल रहे हैं । इन कवियों के वर्णनों से कहीं-कहीं तो यह अनुभूति भी होती है कि कवि नेहरू को इस पार्थिव जगत् से ऊँचा उठाकर देवत्व की श्रेणी में पहुँचाना चाहते हैं। नेहरू का चरित्र मानवीय दुर्बलताओं से दूर एक आदर्श एवं पूर्ण चरित्र लगता है । सभी गुणों ने उन्हें ही अपना आश्रय बनाया है । **'जवाहरतरंगिणी'** एवं **'नेहरू-यशः-सौरभम्'** में जवाहर एवं नेहरू शब्दों का निर्वचन भी नेहरू के गुणों को लेकर

---

१. श्रीनेहरूचरितम्, १०।२ ।
२. नेहरू-सूत्राणि, ४।५९ ।
३. वही० २।३२ ।

ही किया है, इनमें जवाहर नाम की सार्थकता भी बताई है।[1] नेहरू शब्द की व्युत्पत्ति का अपना आकर्षण है—

व्यथितलोकहृदोऽस्त्वथ नेह रुः
प्रबलतोऽप्यबलस्य च नेह रुः।
विविधलोकगणेष्वपि नेह रुः
इति कृतः प्रभुणैष हि नेहरुः ॥[2]

अर्थात् ईश्वर ने नेहरू को इसलिए उत्पन्न किया जिससे कि इस संसार में पीड़ित लोगों के हृदय से करुण-क्रन्दन न हो, जिससे कि इस संसार में बलवान् से निर्बल को भय न हो, जिससे इस संसार में लोगों में संघर्ष न हो।

नेहरू जी के शान्तिप्रिय, देशभक्त, जननेता, युगस्रष्टा, शरणदाता आदि गुणों का इन ग्रन्थों में इतना अधिक वर्णन हुआ है कि ये गुण नेहरू के पर्याय ही प्रतीत होते हैं।

शान्तिप्रिय

नेहरू जी की शान्तिप्रियता इतनी प्रसिद्ध है कि वे **'शान्तिदूत'** के नाम से ही विख्यात हो गए। उन्होंने शान्ति की भिक्षा संयुक्तराष्ट्रसभा (U. N. Assembly) में भी मांगी—

शान्तिरक्षणे संस्कृतिरक्षा
परिहार्यतः संगरदीक्षा
याच्यते मयैष खलु भिक्षा
शूरैर्हि शमो मनसि निधेयः।
शस्त्राघातः सदैव हेयः
क्रोधः क्षान्तेर्बलैर्विजेयो
बलिनामेषा सत्त्वपरीक्षा ॥[3]

अर्थात् शान्ति की रक्षा में ही संस्कृति की रक्षा है। युद्ध की दीक्षा का परिहार किया जाना चाहिए, मैं यही भिक्षा माँगता हूँ। शूरों को शान्ति मन में

---

१. गीत-जवाहरम्, पृ० ७।
२. जवाहर-तरङ्गिणी, श्लोक ५।
३. जवाहर-चिन्तनम्, गीत ५१।

धारण करनी चाहिए। शस्त्रों का प्रहार सदा निन्द्य है। क्रोध को क्षमा के बल से जीतना चाहिए, बलवानों की यह शक्ति की परीक्षा है।

राष्ट्रों को युद्ध-रहित विवाद करने के लिए नेहरू कहता है कि वह्नि से निकली हुई एक ज्वाला भी समस्त विश्व को जलाने में समर्थ है। सारे जल समूह भी उसे शान्त करने में पर्याप्त नहीं हैं। अतः आज से यह शिक्षा हो कि राष्ट्रों का विवाद युद्ध-रहित हो—

एका ज्वाला वह्निनिःसृता
दग्धुं विश्वं सर्वसमर्था
जलनिधयो न शमे पर्याप्ता
अद्यतोऽप्यतो भवतु हि शिक्षा
युद्धवर्जिता प्रश्नसमीक्षा।[1]

नेहरू जी ने अपने युद्ध-विरोधी विचार स्थान-स्थान पर व्यक्त किए हैं। शान्ति का मार्ग ही कल्याणकारी है, युद्ध में किसी का कल्याण संभव नहीं। अतः वह मार्ग त्याज्य है, यह भाव नेहरू ने ११.८.५१ को व्यक्त किया था—

समरेऽधिगतं नैव कल्याणं
हानं ध्वसनं प्राणमोषणं
मिथो रोषणं द्वेषपोषणं
नैव कल्याणं नैव कल्याणम्

संपद् राष्ट्रे श्रमैरर्जिता
क्षमिषु स्यात् सा समं विभक्ता
रणैरन्यथा यदि विनाशिता
नेदमुद्धरणं नैव कल्याणम्

जयेन वा नन्वपजयेन वा
विनाशरीतिः समरे सर्वा
विपद् विजयिनो भवत्यपूर्वा
नास्त्यतस्त्राणं नैव कल्याणम्

---

१. जवाहर-चिन्तनम्, गीत ५१।

महाप्रयत्नैः प्रकल्पबन्धाः
रचनीया वा यन्त्र-कबन्धाः
अन्ननिर्मितौ कृताः प्रबन्धाः
तेषां हि हरणं नैव कल्याणम्

विध्वंसकशस्त्रैर्विनाश्यते
क्षणेन, यन्नर आयुषि कुरुते।
अतो न युद्धे बुद्धौ रमते
नो मनोरमणं नैव कल्याणम्

युद्धेनार्जनरीतिरुज्झिता
अस्माभिर्ननु चिरं वर्जिता
शान्तिमार्गपरगतिः समुचिता
किं नानुसरणं तत्र कल्याणम् ।[1]

अर्थात् युद्ध में कभी भी कल्याण प्राप्त नहीं होता, वहाँ तो हानि, विध्वंस और प्राणापहरण ही होता है, परस्पर रोष होता है और विद्वेष की पुष्टि होती है, कल्याण कभी नहीं होता।

राष्ट्र में श्रम के द्वारा अर्जित संपत्ति शान्त व्यक्तियों में समान रूप में विभाजित की जा सकती है, किन्तु यदि रण के द्वारा उसका विनाश हो जाए तो यह न तो उद्धार है, न ही कल्याण है।

चाहे विजय हो या पराजय हो, युद्ध में विनाश ही प्रमुख है, विजयी पर भी अपूर्व विपत्ति आती है। अतः युद्ध से न तो रक्षा होती है न ही कल्याण होता है।

बड़े-बड़े प्रयत्नों से योजनाएँ बनाई जाती हैं या यन्त्र बनाए जाते हैं, अन्न के उत्पादन के लिए प्रबन्ध किए जाते हैं, युद्ध में उन सबका अपहरण हो जाता है, कल्याण नहीं होता।

मनुष्य सारा जीवन लगाकर जो कुछ करता है वह युद्ध में विध्वंसक शस्त्रों के द्वारा क्षण भर में नष्ट हो जाता है। इसलिए युद्ध में बुद्धि आनन्दित नहीं होती है, क्योंकि युद्ध में न तो मनोरञ्जन है, न ही कल्याण है।

हमने बहुत देर से ही युद्ध के द्वारा कुछ भी प्राप्त करने की पद्धति छोड़ दी है। शान्ति के मार्ग पर चलना ही उचित है। क्या उस मार्ग का अनुसरण कल्याणकर नहीं है?

---

१. जवाहर-चिन्तनम्, गीत ५२।

श्री ज्वालापतिलिङ्गशास्त्री ने तो अपनी पुस्तक का नाम **'श्रीशान्तिदूतः'** रखकर नेहरू और शान्तिदूत में पूर्णतः अभेद माना है।

जवाहरतरङ्गिणी में भी इनकी शान्तिप्रियता का बहुत ही काव्यात्मक वर्णन है।

देशभक्ति

नेहरू का हृदय राष्ट्रीय भावों से ओत-प्रोत है। देशभक्ति के भाव नेहरू में विदेश-गमन से पूर्व ही उद्बुद्ध हो गए थे। इसका अति सुन्दर वर्णन **'जवाहर-जीवनम्'** में हुआ है। राष्ट्रीय भावों से ओत-प्रोत नेहरू अपने नव यौवन में ही एशिया-द्वीप भारत को बन्धन मुक्त कराने की चिन्ता में निमग्न हो गया तथा यूरोप जाने से पूर्व ही कल्पना में खड्ग हाथ में लेकर गया—

राष्ट्रभावैर्भृतात्माऽसौ निमग्नश्चिन्तनेऽभवत्।
भारतमेशियाद्वीपं चाहं मोक्ष्यामि बन्धनात्॥
चिन्तयन् खड्गहस्तोऽसावतिवीरो जवाहरः।
कल्पनागतचित्तस्तु यौरूपमचलत्तदा ॥[1]

नेहरू में भारत को स्वतन्त्र कराने की इतनी तीव्र इच्छा थी कि इस विषय में उन्हें अपने माता-पिता का विरोध भी सह्य नहीं था। भारत-सेवा में रत नेहरू से उनके पिता असन्तुष्ट थे, यह पता लगते ही उन्होंने अपने पिता को कठोर पत्र लिखा कि विद्वान् होकर भी आप स्वतन्त्रता चाहने वाले भारतीय भावों का विरोध क्यों करते हैं—

मोतीलालमसन्तुष्टं दृष्ट्वा भारतमातिदम्।
जवाहरोऽलिखत्पत्रं सुतीक्ष्णं जनकं प्रति॥
किमर्थमवरोधो हि क्रियते विदुषात्मना।
भवता भारतीयानां भावानां मोचनात्मनाम्॥[2]

नेहरू में देशभक्ति कूट-कूट कर भरी है। वे यदि कहीं आमोद-प्रमोद के लिए जाएं वहाँ भी उनके हृदय में स्वतन्त्रता की आग धधकती रहती है।

---

१. जवाहर-जीवनम्, पृ० २४।
२. वही, पृ० २७।

कश्मीर की निश्छल सुषमा के समक्ष उन्हें समस्त यूरोप का वैभव एवं सौन्दर्य कृत्रिम एवं तुच्छ प्रतीत होता है। उज्ज्वल कश्मीर की समृद्धि को जानकर (जवाहर बोले कि) यूरोप के देश क्यों अभिमान से सिर ऊँचा किए कह रहे हैं कि कृत्रिम तथा प्राकृत रूपों से हमारे देश की भूमि सुन्दर है—

ज्ञात्वा काश्मीरदेशस्य समृद्धिं परमोज्ज्वलाम् ।
किं यौरुपीया देशा हि गर्वेणोन्नत-कन्दराः ।
कृत्रिमैः प्राकृतैः रूपैः सुन्दरास्मद्वसुन्धरा ॥[1]

नेहरू स्वतन्त्रता प्राप्ति के लिए अधिक दृढ़प्रतिज्ञ होकर कहता है कि जब तक देश को स्वाधीन नहीं कर लूँगा सत्याग्रह-युद्ध से नहीं हटूँगा—

विरतो न भविष्यामि रणात्सत्याग्रहात्मकात् ।
स्वाधीनं न करिष्यामि यावद्देशं हि भारतम् ॥[2]

नेहरू स्वतन्त्रता के लिए लौकिक सुखों को छोड़ने के लिए भी दृढ़प्रतिज्ञ हैं—**'सर्वाणि लौकिकसुखान्यपि हातुमस्य पूर्त्यर्थमम्ब! दृढ़निश्चयवानतोऽस्मि'**[3] अर्थात् माता जी ! इसकी (स्वतन्त्रता प्राप्त कराने का व्रत) पूर्ति के लिए सारे लौकिक सुखों को त्यागने के लिए भी मैं दृढ़निश्चय हूँ।

देशभक्ति की भावना न केवल नेहरू में है अपितु सम्पूर्ण परिवार ही राष्ट्रीय-भावों से ओत-प्रोत है। कमला के विषय में नेहरू स्वयं कहता है कि **'तस्याः हृदये यादृशी प्रज्वलिता देशभक्तिरस्ति, न तादृशी ममापि हृदयेऽस्ति'**।[4] अर्थात् उसके हृदय में जैसी प्रज्वलित देशभक्ति है वैसी मेरे हृदय में भी नहीं है।

जननेता

जहाँ नेहरू में असीम देश-भक्ति है वहाँ जननेतृत्व की क्षमता भी अद्भुत है। उनकी इस नेतृत्व की क्षमता के कारण ही ४० वर्ष की अल्पायु में ही नेहरू को कांग्रेस का अध्यक्ष बना दिया गया—**चत्वारिंशद्वया नायकः अध्यक्षपदे युक्तो युवकः**[5] अर्थात् नायक,

---

१. जवाहर-जीवनम्, पृ० ३१।
२. वही० पृ० ३२।
३. श्रीनेहरूचरितम्, १०।२०।
४. जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्, पृ० १८।
५. जवाहर-चिन्तनम् ११।

(नेहरू) ४० वर्ष की आयु में ही राष्ट्रसभा के अध्यक्ष पद पर नियुक्त किया गया ।

४० वर्ष की आयु में ही इन्होंने राष्ट्र का नेतृत्व किया, गुण ही पूजा के स्थान हैं, आयु का परिमाण नहीं—

राष्ट्रसभाध्यक्षपदे योजनाऽस्य जाता
चत्वारिंशद्वयसो राष्ट्रनेतृता
पूजास्थानं हि गुणा न वयोमितिरेषा ।[1]

'जवाहर-तरङ्गिणी' में श्री वर्णेकर जी ने इन्हें **'जननेता'** कहा है—**'स जयतु जननेता हिन्दुभूभाग्यधाता'**[2] । नेहरू ने जन-सेवा के समक्ष व्यक्तिगत अथवा पारिवारिक कार्यों को सदा हेय समझा । ग्रामीणों की रक्षा के लिए वे अपनी रुग्ण पत्नी की भी परवाह नहीं करते ।

नेहरू जी की निःस्वार्थ सेवा को देखकर श्री वर्णेकर ने कहा है कि नेहरू जी ने जन्म से ही जो कुछ बोला, देखा, सुना, किया, कहा, स्वीकार किया एवं छोड़ा वह सब दूसरों के लिए ही था—

उत्सङ्गतः स्वजननीजनकद्वयस्य
अव्यक्तकोमलवचः प्रभृति त्वया हि ।
दृष्टं श्रुतं कृतमनूदितमुक्तमात्तं
त्यक्तं च यत्सकलमेव तदन्यहेतोः ॥[3]

अर्थात् अपने माता और पिता की गोद से ही तेरे द्वारा अव्यक्त कोमल वचन इत्यादि जो कुछ देखा गया, सुना गया, किया गया, कहा गया, या ग्रहण किया गया अथवा छोड़ा गया—वह सब दूसरों के लिए ही किया गया ।

न केवल नेहरू प्रत्युत उसकी पत्नी भी जनसेवा की भावना से ओत-प्रोत है । उसकी जनसेवा को देखकर स्वयं नेहरू कहता है कि वह तपस्विनी यह जानकर प्रसन्न ही होगी । उसके हृदय में भी जनसेवा का भाव प्रचुररूपेण है—

---

१. जवाहर-चिन्तनम्, गीत १२ ।
२. जवाहर-तरङ्गिणी, श्लोक २ ।
३. जवाहर-तरङ्गिणी, श्लोक २२ ।

सा तपस्विनी ज्ञात्वेदं प्रसन्नैव भविष्यति । तस्याः हृदयेऽपि जनसेवाभावनायाः प्रचुरं प्राबल्यमस्ति ।[1]

अपने इस गुण के कारण नेहरू ने अत्यधिक लोकप्रियता प्राप्त कर ली है । इसकी पुष्टि अंग्रेज इन्स्पेक्टर के इस कथन से होती है कि जवाहरलाल ने भारतीय-जन के चित्त मोहने में इतनी सफलता प्राप्त की है कि प्रचण्डातप में भी २५ हजार लोग उसका भाषण सुनने के लिए उपस्थित थे । उनका भाषण सुनकर सभी ने मन्त्रमुग्ध होते हुए 'असहयोग' की प्रतिज्ञा की—

जवाहरलालेन भारतीयजनचित्तमोहने सफलता सम्प्राप्ता । प्रचण्डातपेऽपि पञ्चविंशति-सहस्रजनाः उपस्थिताः आसन् । अथ च तस्य भाषणं श्रुत्वा सर्वेऽपि मन्त्रमुग्धा इवासहयोगं कर्तुं प्रतिज्ञां कृतवन्तः ।[2]

इससे नेहरू की लोकप्रियता के साथ-साथ उनकी भाषण-कला की निपुणता भी द्योतित होती है।

पं० जवाहरलाल नेहरू के गुणों से सब इतने प्रभावित थे कि अंग्रेज इंस्पेक्टर विक्टर को भी कहना पड़ा कि जवाहरलाल कोई सामान्य व्यक्ति नहीं है । संभवतः वह इस युग का असाधारण युगस्रष्टा होगा—

जवाहरलालः न सामान्यमानवः । मन्येऽहमस्मिन् युगेऽसाधारणोऽयन्नरः युगस्रष्टा भविष्यति ।[3]

जवाहर-चिन्तनम् में भी इन्हें भारत-प्रणेता कहा गया है—

स्वागताय सज्जोऽसौ भारतप्रणेता ।[4]

अर्थात् भारत का निर्माता (नेहरू) स्वागत के लिए तैयार है ।

अन्तिम-यात्रा में भी जवाहर को नवभारत का निर्माता कहा है—

निर्माता नवभारतस्य नवतां देशाय दित्सुः पुनः ।[5]

अर्थात् देश को पुनः नवीनता देने का इच्छुक नवभारत का निर्माता ।

नेहरू जी की गम्भीरता, निर्भयता, वाक्पटुता, कोमलता, सहृदयता, कर्मठता आदि का स्थान-स्थान पर वर्णन प्राप्त होता है ।

---

१. जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्, पृ० १० ।
२. वही०, पृ० १,२ ।
३. वही०, पृ० ४७ ।
४. जवाहर-चिन्तनम्, पूर्व-जवाहरः, गीत १२ ।
५. अन्तिम-यात्रा १२ ।

गम्भीर—नेहरू जी की गम्भीरता का बहुत ही आलंकारिक वर्णन करता हुआ कवि कहता है कि सिन्धु में घोर बडवानल एवं अनेकों नक्रों का वास होता है, नदी अपने तटों को निमग्न किए रहती है एवं नीचे की ओर जाने की उसकी प्रवृत्ति है। अतः व्याकुल हुई भयभीत गम्भीरता ने अभयवास सोचते हुए निर्भीक होकर तुम्हारे मानस में निवास लिया—

सिन्धुः स घोरवडवानलनक्रवासः
कूलंकषाश्च सरितश्चिरनिम्नगास्ताः।
इत्याकुला ह्यभयवासविचिन्तयाऽसौ
गम्भीरता गतभया तव मानसेऽभूत्॥[1]

जवाहर-जीवनम् में भी इन्हें समुद्रवत् गम्भीर बताया गया है—

समुद्रमिव गम्भीरं चरितं धीरवीरजम्।[2]

अर्थात् (नेहरू का) चरित्र धैर्य-वीरता से पूर्ण, समुद्रसम गम्भीर है।

बालसुलभ चंचलता—

जहाँ नेहरू में गम्भीरता है वहाँ उनमें बालसुलभ चंचलता भी सहज ही देखी जा सकती है। उनकी वत्सलता इतनी प्रसिद्ध है कि बच्चे उन्हें 'चाचा नेहरू' ही कहने लगे—

नैसर्गिकी तनयवत्सु च बालकेषु
सा बन्धुता तव च वत्सलता प्रसिद्धा।
पित्राश्रयप्रणयिभिः सकलैरतस्त्वं
बालैः पितृव्यपदवीं प्रणयेन नीतः॥[3]

अर्थात् पुत्र के समान बालकों के प्रति तुम्हारी वह स्वाभाविक प्रीति तथा वात्सल्य प्रसिद्ध है। इसलिए पिता की गोद के इच्छुक सब बालकों ने स्नेह से तुम्हें अपना चाचा बना लिया।

वाणी का धनी—

नेहरू वाणी के धनी थे। उनके वाक्प्रभाव का अति आकर्षक वर्णन करते हुए श्री वर्णेकर कहते हैं कि जब भी नेहरू किसी सभा व संसद् में सहेतुक अथवा

---

१. जवाहर-तरङ्गिणी, श्लोक १०।
२. जवाहर-जीवनम्, पृ० ३३।
३. जवाहर-तरङ्गिणी, श्लोक ४८।

अहेतुक जो कुछ भी बोल देते हैं लोग उस पर विचार करते हैं, उस पर कुछ बोल देते हैं, टिप्पणी करते हैं, सुनते हैं एवं उसकी प्रशंसा और आलोचना करते हैं—

यद्यद् भवान् सदसि संसदि वा ब्रवीति
वाक्यं सहेतुकमहेतुकमात्मबुद्ध्या ।
लोको विचिन्तयति वाचयति शृणोति
वक्ति प्रशंसति विनिन्दति तत्तदेव ॥[1]

जवाहरलाल जी की वाक्पटुता का वर्णन **'जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्'** में भी मिलता है। अंग्रेज इन्सपेक्टर विक्टर कहता है कि उनके भाषण को सुनकर सभी ने मन्त्र मुग्ध होकर असहयोग की प्रतिज्ञा की—

अथ च तस्य भाषणं श्रुत्वा सर्वेऽपि मन्त्रमुग्धा इवासहयोगं कर्तुं प्रतिज्ञां कृतवन्तः।[2]

नेहरू जी की वाक्सिद्धि के विषय में जवाहर-तरङ्गिणी में कहा गया है कि नेहरू को दिव्य वाक्सिद्धि प्राप्त है—

न तत्त्वोक्तं न हि मुद्रितं यत्
न मुद्रितं तन्न हि वाचितं यत्।
न वाचितं तन्न हि हृद्‌गतं यत्
दिव्या हि वाक्सिद्धिरियं त्वदीया ॥[3]

अर्थात् तुम्हारे द्वारा कही गई ऐसी कोई बात नहीं जो मुद्रित न हो, और कोई तुम्हारी बात मुद्रित नहीं जिसको पढ़ा न गया हो। ऐसी कोई तुम्हारी बात पढ़ी हुई नहीं जो हृदय में प्रवेश न कर जाए, इस प्रकार की तुम्हारी वाक्सिद्धि दिव्य है।

कोमल एवं सहृदय—नेहरू की कोमलता एवं सहृदयता का भी अत्यन्त काव्यात्मक वर्णन इस साहित्य में उपलब्ध होता है। जवाहर-तरङ्गिणी में कवि

---

१. जवाहर-तरङ्गिणी, श्लोक ६६।

२. जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्, पृ० २।

३. जवाहर-तरङ्गिणी, श्लोक ३९।

ने नेहरू के हृदय की कोमलता का बहुत सुन्दर वर्णन किया है—

मन्दार-कुन्द-कदली-मधुमञ्जरीषु
मल्ली-जपा-बकुल-चम्पक-पाटलेषु ।
दैन्यं विषह्य ऋतुचक्रविनाशजन्यं
हृत्पङ्कजे वसति कोमलता सुखं ते ॥[1]

अर्थात् मन्दार, चमेली, केला, वसन्त ऋतु की आम्र-मञ्जरी, मल्ली, जवा कुसुम, चम्पा एवं गुलाब के पुष्पों में ऋतुओं के चक्र से होने वाले विनाश से उत्पन्न दीनता को छोड़कर कोमलता सुखपूर्वक तुम्हारे हृदयरूपी कमल में निवास करती है ।

जवाहर-जीवनम् में भी कवि ने नेहरू के हृदय को कोमल बताया है जिस पर नित्य भारत-भूमि का दुःख प्रकट करने का प्रभाव हुआ है—

लोका दुःखं प्रकटयन्तो नित्यं भारतभूमिजम् ।
एषां प्रचारस्य हृदि मृदुनि वै जवाहरे ॥[2]

अर्थात् नित्य ही भारत के दुःख को प्रकट करने वालों का प्रभाव जवाहर के कोमल हृदय में हुआ ।

कोमलता के साथ कर्त्तव्य-प्रिय नेहरू के चरित्र में कर्मठता, धैर्य व स्वावलम्बन आदि अपेक्षाकृत कठोर व गम्भीर गुण भी उपलब्ध होते हैं ।

कर्मठ—वैभव में पला भी नेहरू देशार्थ मध्याह्नकाल में भी पद-यात्रा करके ग्रामों में जाता है और प्रचण्डातप की परवाह न करता हुआ सभा में तीन-तीन घण्टे तक भाषण देता है । नेहरू की इस कर्मठता से अंग्रेज इन्सपेक्टर विक्टर इतना प्रभावित हुआ कि वह '**अपूर्वं वैलक्षण्यम्**' अर्थात् अपूर्व विलक्षण है, कहे बिना न रह सका ।

नेहरू की कार्य-क्षमता का वर्णन करता हुआ विक्टर मार्टिन से कहता है कि— '**राज्यसुखेऽपि पालितोऽसौ जवाहरलालः प्रचण्डातपमविगणय्य तस्यां जनसभायां होरात्रयं यावत् भाषणमकरोत् ।**'[3]

---

१. जवाहर-तरङ्गिणी, ११ ।

२. जवाहर-जीवनम्, पृ० २१ ।

३. जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्, पृ० ३ ।

अर्थात् राजसुख में पाला गया भी जवाहरलाल आग उगलती हुई भयानक धूप की उपेक्षा करके उस जनसभा में तीन घण्टे तक भाषण देता रहा।

नेहरू को कार्य करने में अत्यधिक सन्तोष एवं प्रसन्नता का अनुभव होता है। स्वयं नेहरू कहता है—**मया तु विचित्रा स्फूर्तिरनुभूयते। कार्यं कृत्वा प्रसन्नता भवति। दलितानां दीनानाम्मध्ये गत्वा तेषां कथमुन्नतिर्भवेदित्येव कामना मम मनसि निरन्तरन्नृत्यति।**[1]

अर्थात् मैं तो विचित्र स्फूर्ति का अनुभव करता हूँ। मुझे काम करने से प्रसन्नता होती है। गरीब दुःखियों की कैसे उन्नति हो, यही बात बराबर मन में नाचती रहती है।

नेहरू की निःस्वार्थ वृत्ति, सत्त्वप्रधान वृत्ति, धर्म में प्रवृत्ति, उदार-प्रवृत्ति आदि का भी इन ग्रन्थों में सुन्दर वर्णन हुआ है।

स्वावलम्बी—श्रीनेहरूचरितम् में नेहरू के अपने कार्यों को स्वयं करने का उल्लेख प्राप्त होता है। इससे उनके स्वावलम्बन का पता चलता है—

'स्वयं करोति स्म समस्तकार्यम्'[2] अर्थात् वह अपने समस्त कार्य स्वयं करता था। एक अन्य स्थल पर उनका जूते साफ़ करने का उल्लेख कवि ने किया है—**'पादत्राण-परिष्कार-निरतञ्च ददर्श तम्'**।[3] नेहरू स्वावलम्बन में ही उन्नति मानता था—**'स्वावलम्बने निश्चितोन्नतिः'**[4] अर्थात् स्वावलम्बन में निश्चित उन्नति है।

उदारता—नेहरू उदार हृदय का व्यक्ति था। उनकी हत्या का षड्यन्त्र करने वाला एवं उनकी हत्या की चेष्टा करने वाला दोनों का ही उनके द्वारा क्षम्य होना, नेहरू की उदारता की पराकाष्ठा है। नेहरू के मन में उन दोनों के प्रति किसी भी प्रकार का दुर्भाव नहीं आता। नेहरू हत्यारे को क्षमा करते हुए मुक्तरूपेण कहता है कि मैंने क्षमा कर दिया—**'मया तु त्वं क्षम्य एव'**।[5]

इसी प्रकार अपने विरुद्ध हत्या का षड्यन्त्र रचने वाले मार्टिन को भी स्वतन्त्रता प्राप्ति के बाद नेहरू कहता है—**गतं न शोचामि। भवद्भिः सह**

---

१. जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्, पृ० ६।

२. श्रीनेहरूचरितम्, ६।१८।

३. वही, ६।१९।

४. जवाहर-चिन्तनम्, गीत ४१।

५. जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्, पृ० ४३।

वयं मित्रतां समीहामहे ।[1]

अर्थात् मैं बीते को नहीं सोचता हूँ । हम तो आप लोगों के साथ मित्रता चाहते हैं ।

दयालु व दानी—नेहरू को दया-दान आदि गुण तो अपनी माता से विरासत में ही मिले थे—**'स्वरूपा-मातृ-संस्कारैर्दया-दमपरायणः'**[2] अर्थात् माता स्वरूपा के संस्कारों से वे दया-दम-परायण बने ।

विनयी— **'श्रीनेहरूचरितम्'** में नेहरू के विनीत स्वभाव का अति लालित्यपूर्ण वर्णन है । माता-पिता की श्रेष्ठ शिक्षण-कला के अधीन दक्षता पाने पर भी सुरक्षाधिकारियों द्वारा उसे अनुशासन सिखाया गया । नए बछड़े की भांति नवीन शिक्षा से अनायास उसने अलौकिक विनय सम्पत्ति को प्रचुरता से प्राप्त कर लिया—

पित्रोः सुशिक्षण-कला-वशगोऽपि दक्षो
रक्षाधिकार-पुरुषैः प्रतिबोधितोऽभूत् ।
दम्यो यथा स शनकैर्नवशिक्षयैव
लोकातिगां विनयसम्पदमाप भूरि ।।[3]

धैर्यवान्—जहाँ नेहरू में दान-दया आदि गुण प्रचुरता से हैं वहाँ उनका धैर्य भी प्रशंसनीय है । नेहरू के धैर्यधनी होने का बहुत ही काव्यात्मक वर्णन हमें इस साहित्य में उपलब्ध होता है । **'श्रीनेहरूचरितम्'** में कवि ने नेहरू के पूर्वजन्म के अर्जित संस्कारों को ही इसका कारण माना है—

प्राग्जन्म-सम्भृत-सुसंस्कृति-गौरवेण
बालोऽप्यबाल इव धैर्यधनो बभूव ।
नैसर्गिकी नवमणेः कमनीयकान्तिः
संस्कारतोऽतिविमलां सुषमां बिभर्ति ।।[4]

अर्थात् पूर्वजन्म में अर्जित श्रेष्ठ संस्कारों की गरिमा के कारण वह (जवाहरलाल) बच्चा होने पर भी बड़ों की भाँति धैर्यधनी था । (खान से

---

१. जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्, पृ० ४८ ।
२. जवाहर-जीवनम्, श्लोक० ८६ ।
३. श्रीनेहरू-चरितम्, ५।२ ।
४. श्रीनेहरू-चरितम्, ५।१ ।

निकली हुई) नयी मणि की कमनीय कान्ति साज-सँवार से अत्यन्त भव्य सुषमा धारण कर लेती है।

नेहरू के धैर्य की पराकाष्ठा देखिए—

रक्षाधिकार-विनियोजित-दानवानां
यष्टि-प्रहार-दलितोऽप्यभवद् द्रढीयान् ।
कारानिवास-परिपीडितदिव्यदेहो
धैर्यं मनाङ् न विजहौ न च किञ्चिदूचे ॥[१]

अर्थात् लाठी प्रहार होने पर एवं कारावास से पीड़ित होने पर भी उन्होंने धैर्य नहीं छोड़ा।

नेहरू का नियमित एवं सादा जीवन, उच्च-विचार, दान-दया, साहस, धैर्य, स्वावलम्बन की वृत्ति, दृढ़निश्चय एवं विनय आदि गुण तो विश्व के लिए उदाहरण ही बन गए हैं।

कुशल प्रशासक—कुशल प्रशासक नेहरू को कवियों ने पूर्वापर संस्कृतियों का संगम माना है—

जातः सितासितपयोमययोः समीपे
भागीरथीयमुनयोः शुभसङ्गमस्य ।
पूर्वापर-द्विविधसंस्कृति-सङ्गमेन
तत्त्वद्गतेन भवति स्फुटमेव नूनम् ॥[२]

अर्थात् श्वेत और कृष्ण जल वाली गङ्गा-यमुना के शुभ सङ्गम के निकट तुम्हारा जन्म हुआ है। यह बात तुम्हारे अन्दर पूर्व और पश्चिम दोनों प्रकार की संस्कृति के सङ्गम से अत्यन्त स्पष्ट है। जहाँ नेहरू कुशल प्रशासक हैं वहाँ समाजसुधारक, नारी-जाति के उद्धारक एवं जाति-पांति के भेद-भाव को मिटाने में भी उनका योगदान प्रशंसनीय है।[3] **'गीतजवाहरम्'** में नेहरू को **'अजातशत्रु'** कहा गया है।[४]

साहित्यकार—जहाँ नेहरू में इतने गुण हैं वहाँ साहित्यकार का हृदय भी उनमें है। कारावास काल में समय का सदुपयोग करते हुए नेहरू ने जो ग्रन्थ

---

१. श्रीनेहरू-चरितम्, १३।३६।
२. जवाहर-तरङ्गिणी, श्लोक २५।
३. गीत-जवाहरम्, पृ० ७-८।
४. वही, पृ० १८

रचे उन सभी ग्रन्थों का अध्ययन उपन्यास की भाँति सरस है । उनकी नौ कृतियाँ हैं १-विश्व-इतिहास की झलक २-हिन्दुस्तान की कहानी ३-लड़खडाती दुनियां ४-इतिहास के महापुरुष ५-राजनीति से दूर ६-राष्ट्रपिता ७-पिता के पत्र पुत्री के नाम ८-हिन्दुस्तान की समस्याएँ ९-कुछ पुरानी चिट्ठियां ।[1]

महामानव जवाहर के विषय में विश्व कवि श्री रवीन्द्रनाथ ठाकुर ने कहा था—"**श्रीजवाहरलालेन राजनैतिकसंघर्षक्षेत्रे—यत्र प्रायः छल-छद्म-कूट-कपट-आत्मप्रवंचनादिका दोषाश्चरित्रं दूषयन्ति—शुद्धाचरणस्याप्रतिमः आदर्शः स्थापितः, सोऽति विकट-संकट-संघट्ट-पूर्णादपि सत्याद्विमुखो नाभवत् । विविध-सुविधा-सुख-विधायकेनाप्यसत्य-व्यवहारेण तन्मनोमेलनं न कृतम् । तस्य प्रतिभा प्रभावशालिनी प्रज्ञा कूटनीतिकादसन्मार्गात्सर्वदावज्ञापूर्वकं प्रतिनिवृत्ता, यत्र साफल्यमत्यल्प-मूल्यं तुच्छं च भवति ।**[2]

अर्थात् श्रीजवाहरलाल ने राजनैतिक क्षेत्र में—जहाँ पर प्रायः छल-छद्म, कपट-कूट, आत्मप्रवञ्चनादि दोष चरित्र को दूषित करते हैं, शुद्ध आचरण का अप्रतिम आदर्श स्थापित किया । वे अति विकट संकट-संघट्ट-पूर्ण सत्य से भी विमुख नहीं हुए । विविध-सुविधा सुख-विधायक भी असत्य व्यवहार से उनका मन नहीं मिला; उनकी प्रतिभा के प्रभाव से शालिनी प्रज्ञा कूटनैतिक असन्मार्ग से अवज्ञा तथा अरुचिपूर्वक हट जाती थी, जहाँ पर कि सफलता अल्प-मूल्य तथा तुच्छ बन जाती है ।

उन वीर नायक के चरित्र की प्रशंसा न केवल उनके भारतीय प्रशंसकों ने की अपितु प्राणों तक के शत्रु ब्रिटेन आदि देशों ने भी की है । नेहरू जी पर '**शूरो वैरि-प्रशंसितः**'[3] अर्थात् '**शूरवीर वही है जिसकी वैरी भी प्रशंसा करें**' यह उक्ति पूर्णतः चरितार्थ होती है ।

---

१. जवाहर-जीवनम्, विश्वात्मा पृ० ७५ ।

२. जवाहर-जीवनम्, विश्वात्मा, पृ० ७४ ।

३. वही, पृ० ७४ ।

४

नेहरू-विषयक संस्कृत-काव्यों का भाव व कला पक्ष

पं० जवाहरलाल नेहरू विषयक संस्कृत वाङ्मय का भावपक्ष समृद्ध है। मार्मिक स्थलों की कमनीयता में विलसित कल्पना की क्रीड़ा, प्रकृति-चित्रण की मनोहरता, विचारों की गम्भीरता तथा भाव-अनुभाव आदि के कारण इन काव्यग्रन्थों की सरसता प्रशस्य है।

(क) **कल्पना तत्त्व**—उत्कृष्ट काव्य में उदात्त कल्पना अनिवार्य तत्त्व है। कवि की कल्पना शक्ति की पहचान उसके द्वारा चुने हुए स्थलों की मार्मिकता से भी होती है तथा घटनाओं की ऐतिहासिकता के साथ मनःप्रसूत कथाओं के संयोग से भी। इन दोनों के साथ ही अप्रस्तुत विधान में भी कल्पना का चमत्कार द्रष्टव्य होता है। नेहरू-चरित्र के संस्कृत गायकों का मन नायक के जन्म व मृत्यु के क्रमशः सुखद और शोक-पूर्ण अवसरों के अतिरिक्त प्रकृति-चित्रण, नेहरू-विवाह, स्वातंत्र्य-संघर्ष और स्वतन्त्रता-प्राप्ति इत्यादि विविध-स्थलों में अत्यधिक रमा है। **'श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्यम्'** महाकाव्य में श्री विष्णु का गान्धी के रूप में अवतार और अन्य देवी देवताओं का विविध राजनीतिज्ञ देवताओं के रूप में अवतार एक मनोहर कल्पना है। पं० मोती लाल नेहरू द्वारा किसी तपस्वी मुनि को प्रसन्न कर आशीर्वाद रूप में पुत्र जवाहर को प्राप्त करने की कल्पना **'जवाहर-जीवनम्'** में मिलती है।[1] इसी का विकसित रूप श्रीब्रह्मानन्द शुक्ल ने अपने महाकाव्य के तृतीय सर्ग में कल्पित किया है। जिस योगी की सेवा से महामना मदनमोहन मालवीय के साथ पं० मोतीलाल नेहरू पुत्रार्थ आशीर्वाद पाने के लिए गए थे उसने आशीर्वाद तो दिया ही, स्वयं ही गीतोक्त **'शुचीनां श्रीमतां गेहे योगभ्रष्टोऽपि जायते'**[2] अर्थात् **योगभ्रष्ट पुरुष पवित्र आचरण वाले तथा श्रेष्ठ पुरुषों के घर जन्म लेता है'** वचन के अनुसार जवाहरलाल के रूप में जन्म लिया।[3]

---

१. जवाहर-जीवनम्, जवाहर-जन्म, पृ० १७।

२. श्रीमद्भगवद्गीता, ३।४१।

३. श्रीनेहरूचरितम्, तृतीय, चतुर्थ सर्ग।

'नेहरूयशःसौरभम्' में भारतभूमि-वन्दना, कश्मीर-सुषमा इत्यादि वर्णनों में कल्पना की सुरम्यता देखते ही बनती है। हिमालय के शिखरों से, रमणीय झरनों से पुष्पित एवं पल्लवित वृक्षों से, दिव्य-दर्पणवत् स्वच्छ सरोवरों से तथा पक्षियों के कलरव से स्वर्ग का उपहास सा करती हुई कश्मीर घाटी की अंगराग रहित ग्राम कन्याएं अनंग-राग-स्वर-गीतिका सी प्रतीत होती हैं।[1] प्रकृति वर्णन के संश्लिष्ट चित्र प्रस्तुत करने में **'श्रीनेहरूचरितम्'** अत्यन्त प्रभावी रहा है। कश्मीर-सुषमा का सजीव चित्र उपस्थित करता हुआ कवि कहता है कि—

यत्र प्रसूनगन्धाढ्यः पवनोऽतिमनोरमः।
हिमभारनतो मन्ये मन्दं वाति सदैव हि॥[2]

अर्थात् जहाँ (कश्मीर में) पुष्पों की गन्ध से सुगन्धित पवन मानो बर्फ के बोझ से दबा हुआ होने के कारण ही सदा मन्द-मन्द बहता है।

विभिन्न प्रकार के पक्षियों का श्रुतिमधुर कलरव पर्यटकों के मन को हरता सा है—

नानाविहग-जातीनां कूजनं श्रवणप्रियम्।
हरतीव मनो यत्र यात्रा-कर्म प्रकुर्वताम्॥[3]

'नेहरू-यशः-सौरभम्' में वन-कुञ्जों में सब ऋतुओं का सतत वास, भौरों की मधुर झंकार से कम्पित पत्तों से निकलती हुई सुगन्ध वाले तथा नव-विकसित केसर से युक्त दिशाओं में गतिशील पवन से समृद्ध कश्मीर घाटी की छवि अंकित की गई है—

द्विरेफझङ्कार-चलद्-दलोद्गिरत्
सुगन्धबन्धैर्नवफुल्ल-केसरैः।
दिशोऽनुधावन्मधुरानिलैरियं
न कस्य चित्तं कुरुते वशंवदम्॥[4]

---

१. नेहरूयशःसौरभम्, १।१६-२५।
२. श्रीनेहरूचरितम्, २।६।
३. वही, २।१०।
४. नेहरूयशःसौरभम्, १।२०।

'जवाहर-जीवनम्' में कश्मीर सुषमा की निम्नलिखित पंक्तियां किस सहृदय को आकृष्ट नहीं कर लेंगी—

> वहन्तमनिलैर्मन्दैर्दहन्तं मदनानलैः ।
> पूजितं पुष्पबाणैश्च केकी-कोकिल-कूजितम् ।।
> रम्योद्यानैः पयोयानैर्गानैस्तानैश्च गुंजितम् ।
> फलफुल्लैश्चलदलैः सलिलैः कल-कलायितम् ।।[1]

अर्थात् (वह कश्मीर) शृङ्गारवर्द्धक, मन्द-वायु-पूरित, मदनानल से उद्दीपित, काम के पुष्प-बाणों से पूजित, मयूर, कोयलों से कूजित, रम्य उद्यानों तथा झीलों में तैरती हुई नौकाओं में गानों की तानों से गुंजित, झूमते हुए पत्तों फूल-फलों वाले वृक्षों से प्रतिबिम्बित जलों से कल-कल (ध्वनियुक्त) था।

इन रचनाओं में जहाँ प्रकृति-चित्रण में कल्पना की उड़ान द्रष्टव्य है वहाँ शोकपूर्ण अवसरों पर की गई कल्पना भी किसी भी सहृदय को दहलाने में समर्थ है। 'जवाहर-जीवनम्' में 'स्वर्गारोहण' में कवि की वेदना चरम सीमा पर पहुँच गई है। नेहरू के निधन पर कवि कल्पना करता है कि मेघों का गर्जन मानो बहाने से रोना है तथा नेहरू एवं अश्रुयुक्त जनता को देखने के लिए ही बिजली बार-बार चमक रही है—

> आश्वासनार्थं लोकानां सलिलाभ्युक्षणं कृतम् ।
> मेघैर्गर्जनव्याजेन नादो रोदनजः कृतः ।।
> विद्युत्प्रकाशो भवति दर्शनार्थं क्षणे-क्षणे ।
> मुखस्य लोकनाथस्य यूथस्याश्रु-प्लुतस्य च ।।[2]

अर्थात् लोगों को सान्त्वना देने के लिए (मेघों ने) जल बरसाया, गर्जन के बहाने मेघों ने रोने का शब्द किया, लोकनायक नेहरू तथा अश्रु पूर्ण जनता के मुख देखने के लिए बार-बार विद्युत्प्रकाश हो रहा था।

इस प्रकार इस साहित्य में कल्पना का प्राचुर्य है।

विचार-तत्त्व—इन संस्कृत काव्यग्रन्थों में जीवन दर्शन की दृष्टि से भी कमनीय सामग्री संजोई गई है। कर्म-फल का सिद्धान्त, पुनर्जन्म का सिद्धान्त,

---

१. जवाहर-जीवनम्, १९२-९३।
२. वही, स्वर्गारोहणम्, श्लोक ४५५-५६।

भारतीय संस्कृति में पूर्ण आस्था, ईश्वर में विश्वास, शान्ति की उपासना, विश्वबन्धुत्व, समन्वयवादिता, स्वातन्त्र्य-प्रेम इत्यादि से ओत-प्रोत ये काव्य-ग्रन्थ बौद्धिक तत्त्व में सुसमृद्ध ही कहे जाएंगे।

'श्रीनेहरूचरितम्' में कर्म-फल पर विशेष महत्त्व दिया गया है। श्री शुक्ल जी जीवलोक को कर्मप्रधान मानते हैं। उनका विश्वास है कि जो जीव जैसा कर्म करता है उसे वैसा ही फल मिलता है अर्थात् जो अच्छा काम करता है उसे ईश्वर अच्छा फल देता है और जो बुरा काम करता है उसे बुरा फल देता है—

कर्म-प्रधानोऽखिलजीवलोको
यो यादृशं कर्म करोति जीवः।
सर्वेश्वरस्तादृशमेव तस्मै
फलं ददाति प्रियमप्रियं वा॥[1]

इससे कवि की भारतीय दर्शन में पूर्ण आस्था प्रकट होती है।

कवि की न केवल कर्म-फल के सिद्धान्त में अपितु पूर्वजन्म में एवं तप आदि में भी पूर्ण आस्था है। नेहरू के जन्म का कारण वह पूर्वजों का तप ही मानता है—

तं जातुचित्प्रेक्ष्य निगूढभावा
प्रेमाकुला स्वात्मगतं जगाद।
'केनापि पुण्येन समागतोऽसि
स्वपूर्वजानां तपसा च तात!'॥[2]

अर्थात् किसी समय उसे देखकर (अपने हृदय में बहुत से) भावों को छिपाए प्रेम-विह्वल होकर वह (स्वरूपा माता) मन ही मन बोली—'बेटे! तुम अपने पूर्वजों के किसी पुण्य एवं तप से ही यहाँ आए हो।

इस साहित्य में जहाँ कर्म-फल एवं पूर्वजन्म आदि दार्शनिक तत्त्वों पर आस्था प्रकट की गई है वहाँ भारतीय संस्कृति के अन्य तत्त्व भी उपलब्ध होते हैं। शान्ति के उपासक नेहरू ने विश्वबन्धुत्व पर विशेष बल दिया है। इस साहित्य में सत्य, श्रम एवं श्रद्धा में भी पूर्ण आस्था प्रकट की गई है।

---

१. श्रीनेहरू-चरितम् ३।६।
२. वही, ५।४।

'श्रीनेहरूचरितम्' में कवि कहता है कि श्रद्धा के अनुसार ही लोगों को सब कार्यों में सफलता मिलती है—

'श्रद्धानुरूपा सकलार्थसिद्धिरास्ते जनानाम्'[1]

आस्थावान् कवि ने सत्य एवं श्रम को भी सफलता का कारण माना है—

'सत्यश्रमाभ्यां सकलार्थसिद्धिः'
मन्त्रः सदाऽयं परिचिन्तनीयः ।[2]

अर्थात् 'सत्य एवं परिश्रम से सब काम सफल होते हैं', यह मन्त्र सदा ध्यान में रखना चाहिए ।

इस प्रकार बौद्धिक-तत्त्व ने भी इस साहित्य की शोभा में वृद्धि की है ।

रसतत्त्व—इन सभी ग्रन्थों में जहाँ विचारों की विविधता एवं कवि की अनूठी कल्पना दृष्टिगत होती है वहाँ रसों का सतत प्रवाह भी प्रवाहित हो रहा है । प्रायः कृतियाँ करुण रस से ओत-प्रोत हैं । कहीं मोतीलाल एवं कमला के निधन पर नेहरू का शोक असह्य है तो कहीं नेहरू के दिवंगत होने पर इन्दिरा का कारुणिक क्रन्दन । विलाप करती हुई इन्दिरा कहती है कि हे पिता जी ! मुझे छोड़कर पहले मेरी माँ स्वर्ग को चली गई और अब यह मेरा दुर्भाग्य है कि आप भी आज मुझे छोड़कर चले गये—

अयि तात ! विहाय मामितो
जननी मे प्रथमं दिवं गता ।
विपरीतदशा ममेदृशो
त्वमपोहाद्य विहाय मां गतः ॥[3]

वे (इन्दिरा गांधी) विधि विडम्बना की पात्र होकर, वृक्ष के नीचे कटी हुई लता की भाँति पिता की गोद में पछाड़ खाकर गिर पड़ीं और कुररी की भाँति जोर से विलाप करने लगीं—

१. श्रीनेहरूचरितम्, ३।२३ ।

२. वही, १७।४६ ।

३. वही, १८।६४ ।

कुररीव रुरोद सा भृशं
पितुरङ्के विनिपत्य निर्दयम् ।
समुपेत्य विधेर्विडम्बनां
विनिकृत्तेव लता तरोरधः ॥[1]

विलाप करती हुई इन्दिरा पुनः पुनः अपने मृत पिता से पूछती है कि बताइये, मेरा यहाँ अब कौन है जो मुझ दुखिया को लाड़-प्यार करे ? अथवा माता-पिता के बिना सन्तान के दुःख को शान्त करने के लिए कौन समर्थ हो सकता है—

वद कोऽसि ममेह साम्प्रतं
परिखिन्नामपि योऽद्य लालयेत् ?
जननी-जनकौ विनाऽथवा
परिताप-प्रशमाय को भवेत् ? ॥[2]

मैं (इन्दिरा गांधी) अपने मनोगत भाव को किसके सामने व्यक्त करूँ ? मेरे चित्त की दशा को इस संसार में कोई दूसरा व्यक्ति नहीं जान सकता—

कथयामि कथं मनोगतं
निजभावं वद कस्य सम्मुखे ?
मम चित्तदशामिमामहो
नहि जानाति परः पुमानिह ॥[3]

न केवल इन्दिरा अपितु वहाँ उपस्थित प्रत्येक व्यक्ति रो पड़ा । उस समय सारा घर ही करुणा की मूर्ति बन गया—

रुरुदुः समुपस्थिता जनाः
करुणामूर्त्यभवत्तदा गृहम् ॥[4]

यहाँ करुण रस का परिपाक द्रष्टव्य है । कवि की कल्पना बहुत सटीक है कि घर ही करुणा की मूर्ति बन गया ।

१. श्रीनेहरूचरितम्, १८।६३ ।
२. वही, १८।६५ ।
३. वही, १८।६६ ।
४. वही, १८।६७ ।

नेहरू के वियोग में पृथ्वी भी शोक से हिल गई और मेघ-माला ने भी विह्वल होकर आँसू बरसाए—

वसुधाऽपि चचाल शोकतो
घनमालाश्रु मुमोच विह्वला ॥[1]

'जवाहर-जीवनम्' में अबोध बालक का त्रिमूर्ति स्थान के मार्ग में अपने पितामह के साथ नेहरू जी के निधन पर **'अद्येदानीं यावत्प्रियः पितृव्यो नेहरुर्नागतः'**? अर्थात् आज अब तक प्यारे चाचा नेहरू क्यों नहीं आये? पूछना तथा पितामह का स्वाभाविक उत्तर **'वत्स बालानामखिलाधारः पितृव्यो जवाहरो नश्वरेण शरीरेण कदापि नाक्षिपथमागमिष्यति'** अर्थात् **'बेटा! बच्चों का अखिलाधार प्यारा चाचा नेहरू अब नश्वर शरीर से कभी भी नहीं दिखाई देगा'** और बालक का निराश और दुःखी होना किसी भी सहृदय पाठक को भावमग्न करने में समर्थ है।[2]

विभाजन के समय का कारुणिक चित्रण करते हुए कवि एक लोमहर्षक चित्र आंक रहा है—

हा पुत्र! पुत्रि! क्वासि त्वं हा भ्रातर्नाथ! पाहि माम्।
वद तात! स्वसा! मातः! क्व गता मम बान्धवाः॥
रक्ष मां, पाहि मां, वृद्धां दीनां शरणमागताम्।
गुरूणामवताराणां पीराणामपि सेविकाम्॥
नाथद्वारे गुरुद्वारे श्रद्धाभक्ति-समन्विताम्।
गिरिजा-मस्जिदेषु चाथेशामूसावुपासिकाम्॥
अयोध्या-मथुरा-माया-प्रयागे तीर्थ-संगताम्।
हरिद्वारेऽजमेरेऽथ पावने नतमस्तकाम्॥
जन्माष्टम्यां नवम्यां च पूर्णिमायां सुमंगलाम्।
दुर्गाष्टम्यां नवम्यां वै रक्षायां शुभ-चिन्तिकाम्॥
दीपमालावसन्तादौ होलिकोत्सवमुत्सुकाम्।
मदीने यावने मक्के कोटलेऽटल-भावनाम्॥
पटने ननकाणे च गुरुषु गुरु-गौरवाम्।
बौद्ध-जैन-नवीनेषु मतेषु सर्व-सम्मताम्॥

---

१. श्रीनेहरुचरितम्, १८।७४।

२. जवाहर-जीवनम्, स्वर्गारोहणम्, श्लोक ४६७-४७१।

पुराणेऽथ कुराने चाथेञ्जीले ग्रन्थसाहिबे ।।
व्याख्याने श्रुत-धर्माख्यगाथामाश्रितपालिनीम् ।।[1]

अर्थात् हा बेटा ! बेटी ! तुम कहाँ हो ? हे भाई ! हे नाथ ! मेरी रक्षा करो ! हे माता ! पिता ! बहिन ! बोलो, मेरे बन्धु कहाँ गये ? शरण में आयी, गुरु, अवतार, पीरों की सेविका, नाथद्वारे, गुरुद्वारों में श्रद्धा-भक्ति वाली, गिरिजा, मस्जिदों में ईसा-मूसा की उपासिका, अयोध्या, मथुरा, माया, प्रयाग में तीर्थ-बुद्धि रखने वाली, पवित्र, हरिद्वार तथा अजमेर में मस्तक झुकाने वाली, जन्माष्टमी, रामनवमी व पूर्णिमा को मंगल-कामना करने वाली, दीपमाला, वसन्त व होली को उत्सव मनाने वाली, यवनों के मक्के-मदीने व कोटले में अटल भावना-वाली, आनन्दपुर, पटने तथा ननकाणा साहिब में गुरुओं का गौरव मानने वाली; बौद्ध, जैन तथा नवीन मतों में सम्मति रखने वाली, पुराण, कुरान, इञ्जिल एवं ग्रन्थ साहिब में से धर्म-कथा सुनने वाली मुझ वृद्धा की रक्षा करो, पालना करो ।

उस समय यह पुकार थी कि क्या दीन दीन-पीड़क है ? क्या धर्म अधर्म के सहारे हैं ? क्या पंथ कुपथ चला है ? क्या ईसा नास्तिक बन गया ? क्या राम, कृष्ण, गुरु, बुद्ध, तीर्थंकर जिन, ईसा, मुहम्मद सभी दुराचार प्रवर्तक हैं—

किं दीनो दीन-पीडोऽस्ति किं धर्मोऽधर्ममाश्रितः ।
किं पन्थाः कुपथं यातः किमीशोऽनीशतां गतः ।।
किं राम-कृष्ण-गुरवो बुद्धस्तीर्थङ्करा जिनाः ।
ईशो मुहम्मदः सर्वे दुराचार-प्रवर्तकाः ।।[2]

इस प्रकार **जवाहर-जीवनम्** के 'राष्ट्र शोकः' अध्याय में कवि अपनी तीव्रतम संवेदना से उत्प्रेरित हो कर वेदना की चरम परिणति पर पहुँच गया है । कवि ने विभाजन के समय का अत्यन्त मार्मिक चित्रण किया है ।

'गीत-जवाहरम्' ग्रन्थ के **'गतः क्व हा । भारत-भास्करो महान्'**[3] इस गीत में करुण रस का सुन्दर परिपाक है ।

---

१. जवाहर-जीवनम्, राष्ट्रशोकः श्लोक ३५६-३६३ ।

२. जवाहर-जीवनम्,, राष्ट्रशोकः, श्लोक ३६४-४६५ ।

३. गीतजवाहरम् ।

अन्तिम यात्रा में नेहरू के निधन पर शोकाकुल कवि कहता है कि—

हा ! हा ! हमारा अनभिषिक्त राजा के समान, स्वातन्त्र्ययुद्ध का नायक, नव भारत का निर्माता, देश को पुनः नवीनता देने का इच्छुक (चला गया)। जिस भवन में रहते हुए इसे कुछ ही पहले जनता द्वारा स्वयं नियुक्त किया गया था वही भव्य भवन आज उसी मृत्युरूपी विपत्ति के शोक से व्याकुल दिखाई दे रहा है—

हा! हा! नोऽनभिषिक्तभूपतिरिव स्वातन्त्र्ययुद्धाग्रणी
निर्माता नवभारतस्य नवतां देशाय दित्सुः पुनः।
यस्मिन्नातिपुरा वसन्नरवरो लोकैर्नियुक्तः स्वयं
भव्यं हर्म्यमिदं प्रणाशविपदा शोकाकुलं दृश्यते ।।[1]

'नेहरूयशःसौरभम्' में तो कवि ने नेहरू के निधन पर प्रकृति की संवेदनशीलता का बहुत ही मार्मिक वर्णन किया है। कवि उत्प्रेक्षा करता है कि अपराध करने पर जन-नायक के द्वारा शरीर-रूपी गृह से अकस्मात् निकाले जाने पर मानो, अघन्य पवन, कम्पित होता हुआ पृथ्वी पर लोट रहा था—

वातो विलुण्ठन् धरणीमधन्यो-
वाति स्म मन्ये परिवेपमानः।
निष्कासितो देहगृहादकस्मात्
कृतापराधो जननायकेन ।।[2]

कवि की यमुना-रुदन की कल्पना भी बहुत सुन्दर है। उद्वेलित होती हुई यमुना, विनाश बुद्धि वाले अपने भाई (यमराज) की क्रूर क्रिया को देखकर पश्चात्ताप करती हुई, मानो रो रही थी—

उद्वेलयन्ती यमुना स्वबन्धोः
क्रूरक्रियां वीक्ष्य विनाशबुद्धेः।
असावरोदीदनुतप्यमाना
तरङ्गशीर्षं परिपीडयन्ती ।।[3]

---

१. अन्तिमयात्रा।
२. नेहरूयशःसौरभम्। ११,१७।
३. वही ११।२३।

जहाँ हृदय-विदारक करुण-रस से मानव-मानस करुण-क्रन्दन कर उठता है वहाँ शान्तरस मानो शान्ति की वर्षा करता हुआ उस क्रन्दन को शान्त करता है। इन सभी ग्रन्थों में शान्तरस भी सम्यक् परिपुष्ट हुआ है—

स्थित-प्रज्ञत्वमापन्नो
निर्ममः सुखदुःखयोः ।
प्रणतः प्रक्रियां भेजे
योगिनामात्मदर्शिनाम् ॥[1]

अर्थात् स्थित-प्रज्ञता को प्राप्त, सुख-दुख में ममता रहित, विनम्र, आत्मदर्शी योगियों के सदृश कार्यों को (नेहरू ने) ग्रहण कर लिया।

नेहरू ने योगी के समान इन्द्रियों को विषयों से पराङ्मुख कर लिया—

इन्द्रिय-व्यवसायेभ्यो
विषयेभ्यः पराङ्मुखः ।
अकरोत् कर्मयोगीव
निरीहो जीवन-क्रियाम् ॥[2]

अर्थात् इन्द्रियों के व्यवसाय वाले विषयों से विमुख होते हुए, वे निरीह, कर्म-योगी के समान, जीवन-कार्य को करते थे।

यत्र-तत्र वात्सल्य भाव अथवा वत्सल रस की छटा भी दर्शनीय है—

सुताननं शारद-पार्वणेन्दुं विलोक्य तातस्य हृदम्बराशिः ।
उद्वेल्लितोल्लास-तरङ्गसङ्ग प्रक्षिप्तरत्नं बहुशोवितेने ॥[3]

अर्थात् शरद् ऋतु के पूर्ण चन्द्रमा तुल्य पुत्र के मुख को देखकर पिता के हृदयरूपी अम्बुराशि ने उद्वेलित उल्लसित लहरों के संग बहुत से रत्नों को बिखेर दिया। (जिस प्रकार ज्वार में समुद्र रत्नों को बिखेर देता है, उसी प्रकार पिता मोतीलाल जी ने भी प्रसन्नता में रत्नों को लुटा दिया।)

---

१. नेहरूयशःसौरभम्, ७।४।
२. वही० ७।६।
३. वही० २।१४।

स्नेहप्लुतं स्तन्यमसौ जनन्या
निपीय नित्यं परिपोषिताङ्गः ।
शनैः शनैः सञ्चित-शक्तिरङ्काद्
मातुर्ययौ मातृभुवः प्रियाङ्कम् ॥[1]

अर्थात् स्नेह से परिपूर्ण माता के दूध का पान करके परिपुष्ट अङ्ग वाला वह बालक धीरे-धीरे शक्ति का संचय करता हुआ माता की गोद से उतर कर मातृ-भूमि की प्रिय गोद में बैठ गया अर्थात् पृथ्वी पर चलने लगा।

'श्रीनेहरूचरितम्' में भी वत्सल-रस का सुन्दर वर्णन है। नेहरू की माता स्वरूपारानी नित्य प्रेम में भाव-विभोर होकर अपने पुत्र को गोदी में बिठाकर चूमती थी तथा अपना दूध पिलाकर निरन्तर उसका पालन करती थी—

माता सदा प्रेम-निबद्ध-चेता-
स्तं लालयन्ती भवति स्म मुग्धा।
स्वाङ्के समारोप्य च तं चुचुम्ब
स्तन्य-प्रदानाच्च पुपोष नित्यम् ॥[2]

जवाहरलालनेहरू एवं इन्दिरा का संवाद वात्सल्य रस का सुन्दर उदाहरण है।[3]

इन कृतियों के भावपक्ष का आलोडन करने से स्पष्ट हो जाता है कि इनमें वीर रस पर्याप्त रूपेण विद्यमान है। इन ग्रन्थों की उक्तियाँ मन में स्थित उत्साह रूप स्थायिभाव को पूर्णरूपेण उद्वेलित करने में समर्थ हैं। देश की स्वतन्त्रता के लिए अपने प्राणों का भी त्याग करने के लिए नेहरू उद्यत हैं। उनके उत्साह में कहीं शिथिलता नहीं दिखलायी देती। दयावीर, दानवीर, धर्मवीर, एवं युद्धवीर के रूप में नेहरू जी का चित्रण किया गया है। दीनों एवं दरिद्रों के प्रति निरन्तर दया का भाव रखने के कारण वे दयावीर, देश हितार्थं सर्वस्व लुटाने के कारण दानवीर, मनुप्रोक्त धृतिक्षमादमोऽस्तेय आदि लक्षणों के अनुसार धार्मिक होने तथा सभी धर्मों के प्रति समदृष्टि

१. नेहरूयशःसौरभम्, २।१७।
२. श्रीनेहरूचरितम्, ५।३।
३. जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्, प्रथमोऽङ्कः।

रखने के कारण धर्मवीर, एवं राष्ट्र के स्वातन्त्र्य संग्राम के निर्भीक सेनानी के रूप में युद्धवीर भी हैं—

कठोरघातैः शतशः समन्तात्
संताडितस्तत्र जवाहरोऽपि ।
स्वराज्य-यज्ञानलमास्फुरन्तं
स्वदेह-रक्ताहुतिभिर्जुहाव ।[1]

अर्थात् वहाँ पर चारों ओर सैंकड़ों कठोर प्रहारों से ताडित जवाहर लाल ने भी प्रज्वलित स्वराज्य रूपी यज्ञ की अग्नि को अपने शरीर के रक्त की आहुति से सन्तुष्ट किया ।

उस यशस्वी जवाहर लाल के श्वेत वस्त्रों पर घाव से चारों ओर बिखरे हुए रक्त-कण, ऐसे मालूम हो रहे थे, मानो प्रचुर आत्मशक्ति को पैदा करने के लिए घने शौर्य के बीज बो दिए गए हों—

क्षतात् समन्ताद् धवलांशुकेषु
यशस्विनो रक्तकणा विकीर्णाः ।
उपार्जनाय प्रचुरात्मशक्तेः
प्रगाढमुप्ता इव शौर्यबीजाः ।।[2]

'श्रीनेहरूचरितम्' में इनकी वीरता का वर्णन करता हुआ कवि कहता है कि सुरक्षा के लिए नियुक्त दानवों (दानव-तुल्य क्रूर शासकों एवं सिपाहियों) के लाठी-प्रहार से पीड़ित होने पर भी वे अत्यधिक दृढ़ होते गये और कारावास से पीड़ित देह वाले होने पर भी उनका शरीर दिव्य होता गया—उन्होंने जरा भी धैर्य नहीं छोड़ा और न (अपनी सफाई में) कुछ कहा ही—

रक्षाधिकार-विनियोजित-दानवानां
यष्टि-प्रहार-दलितोऽप्यभवद् द्रढीयान् ।
कारानिवास-परिपीडितदिव्यदेहो
धैर्यं मनाङ् न विजहौ न च किञ्चिदूचे ।[3]

---

१. नेहरूयशःसौरभम् ५।२४।
२. वही, ५।२६ ।
३. श्रीनेहरूचरितम्, १३।३६ ।

इस प्रकार यह साहित्य वीर-रस से ओत-प्रोत है।

हास-भाव एवं हास्य-रस का पुट भी इन ग्रन्थों में मिलता है। '**जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्**' में कैलाशनाथ काटजू, गोविन्दवल्लभ पन्त एवं जवाहर लाल के सम्वादों में हास्य का सुन्दर समावेश है। सत्याग्रहियों पर अत्याचार को रोकने के लिए अपनी रुग्ण पत्नी को छोड़कर जाते हुए जवाहर से कैलाशनाथ काटजू ने उपहास में कहा—

कैलाशनाथ काटजू—भाग्यवान् भवान्।

जवाहरलालः—इति कथम् ?

कैलाश०—तामबोधां पत्नीरूपेण सम्प्राप्य। यद्यन्या स्यात्...

जवाहर०—तेन किम् ?

कैलाश०—(स्मितं कृत्वा) क्षौरकर्मार्थं नापितस्यावश्यकता न स्यात्। यतः चण्डीभूता सा मार्जन्याः प्रयोगेणैव तत् कर्म कुर्यात्।

जवाहर०—अनुभवी भवान्।

कैलाश०—परानुभवजन्यज्ञानमिदम्।

जवाहर०—कोऽसावनुभूतिकर्ता भाग्यवान् ?

कैलाश०—(गोविन्दवल्लभपन्तं प्रति सङ्केतं कृत्वा) पुरतः परिराजतेऽधुना।

जवाहर०—(गोविन्दवल्लभपन्तं प्रति) सत्यमेतत् ?

गोविन्द०—(मन्दं स्मितं कृत्वा) तत्रापि महत् सुखम्। तदपि भवति भाग्येनैव।

जवाहर०—(अञ्जलिं बद्ध्वा) धन्योऽस्ति गोवल्लभः। (सम्मिलितो हास्यध्वनिः)।

गोविन्द०—(कैलाशनाथं प्रति सङ्केतं कृत्वा विहस्य) सत्यम्। धन्योऽयम् कैलासनाथः गोवल्लभः।[1]

इस सम्वाद में कैलाशनाथ काटजू जवाहरलाल नेहरू से कहता है कि—

कैलाश०—आप भाग्यवान् हैं।

जवाहर०—यह क्यों ?

कैसाश०—कमला जी जैसी भोली स्त्री को पत्नी रूप में पाने से। नहीं तो, यदि दूसरी होती तो—

---

१. जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्, प्रथम अङ्क, द्वितीय दृश्य।

जवाहर०—तो क्या ?

कैलाश०—(मुस्कराकर) केश बनाने के लिए नापित की भी आवश्यकता न पड़ती। क्योंकि चण्डी बन कर वही झाड़ू रूपी छुरे से क्षौर-कर्म कर देती।

जवाहर०—(हंसकर) आप अनुभवी हैं।

कैलाश०—यह ज्ञान दूसरे के अनुभव से मिला है।

जवाहर०—वह भाग्यवान् व्यक्ति कौन है ?

कैलाश०—(गोविन्दवल्लभ पन्त की ओर संकेत कर) सामने ही विराजमान हैं।

जवाहर०—(गोविन्दवल्लभ पन्त की ओर घूमकर) क्या यह सच है ?

गोविन्द०—(थोड़ा मुस्कराकर) उसमें भी बड़ा सुख है। ऐसा भी भाग्य से ही होता है।

जवाहर०—(हाथ जोड़कर) धन्य हो गोवल्लभ ! (सभी हंस पड़े)।

गोविन्द०—(कैलाश नाथ की ओर संकेत कर) सच। धन्य हैं ये कैलाशनाथ गोवल्लभ !

रतिभाव एवं श्रृंगार रस का भी चित्रण यत्र-तत्र मिलता है—

वन्यस्थलेऽत्र कणितान्ययि ! कङ्कणानां
बाले ! बलेन रणितानि च नूपुराणाम् ।
उच्चोच्चमर्मररवाः द्विजकूजहृद्याः
सद्यो विशालनयने ! ननु गोपयन्ति ॥[1]

अर्थात्—हे बाले ! इस वन्यभूमि में कंगनों का कण-कण रव और पायलों की झंकार तथा मनोहर पक्षियों के कलरव के साथ-साथ ऊँचा मर्मर शब्द है। विशालनयने ! ये सब हमारी रक्षा कर रहे हैं।

इसके अतिरिक्त विभाव, अनुभाव एवं संचारी भावों का भी यत्र-तत्र वर्णन मिलता है।

---

१. श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्यम्, ६।६।

कला-पक्ष

पं० जवाहरलालनेहरू-विषयक संस्कृत-वाङ्मय के कलापक्ष की रम्यता सहृदयों को सहज ही आकृष्ट करने में समर्थ है। यहाँ अलंकारों का प्रयोग, छन्दों की छटा और भाषा-शैली की भव्यता सभी अपना-अपना सौन्दर्य विकीर्ण करते दिखाई देते हैं।

अलंकार—पं० नेहरू-सम्बन्धी इस वाङ्मय में काव्य की शोभा को अतिशयित करने वाले अनुप्रास, श्लेष एवं यमक आदि शब्दालंकारों और अतिशयोक्ति, उपमा एवं रूपक आदि अर्थालंकारों का प्रचुर प्रयोग है।

अनुप्रास—**'जवाहर-चिन्तनम्'** के गीतों में प्रायः अन्त्यानुप्रास है। यथा—

ललितकुसुम्भं कमलकोमलं
काश्मीरावनिजनितं तरलं
गङ्गायमुना-संगम-विमलम्।[1]

अर्थात् ललित-कुसुम्भ के सदृश, कमल के समान कोमल, कश्मीर की भूमि में उत्पन्न तरल गङ्गा और यमुना के सङ्गम के समान निर्मल (जवाहरलाल का उद्घोष मङ्गल घड़ी कर रही है।)

इस गीत में **'अलम्'** वर्ण समूह की प्रत्येक पंक्ति के अन्त में आवृत्ति होने के कारण यहाँ अन्त्यानुप्रास है।

इसी प्रकार एक अन्य गीत में अन्त्यानुप्रास का प्रयोग द्रष्टव्य है—

स्वराज्यलाभे सर्वसमस्याः
स्थिताः पुरो नो विजृम्भितास्याः
न वादजातैस्तास्तु निरस्याः।[2]

अर्थात् स्वराज्य की प्राप्ति पर सभी समस्यायें हमारे सामने मुंह खोले खड़ी हैं। केवल बातों से उनका समाधान नहीं किया जा सकता।

'अस्याः' वर्ण समूह की प्रत्येक पंक्ति के अन्त में आवृत्ति होने के कारण यहाँ अन्त्यानुप्रास है।

---

१. जवाहर-चिन्तनम्, पूर्वजवाहर, गीत १।
२. वही, उत्तर जवाहर, गीत ५४।

जवाहर तरंगिणी का निम्नलिखित श्लोक अनुप्रास का सुन्दर उदाहरण है—

वन्दारुवृन्द-हृदयाम्बुज-चिन्तनीयं
वृन्दारकेन्द्र-नयनाम्बुज-वीक्षणीयम् ।
सानन्दनन्द वदनाम्बुज-चुम्बनीयं
गोविन्दसुन्दर पदाम्बुजमेव वन्दे ।[1]

अर्थात् भक्तजनों के हृदय रूपी कमल के द्वारा जिसका चिन्तन किया जाता है, भगवान् इन्द्र स्वयं अपने सहस्र नयनकमलों से जिसका वीक्षण करते हैं, आनन्दपूर्वक नन्द के मुख-कमल के द्वारा जिसका चुम्बन किया जाता है, मैं केवल ऐसे गोविन्द (कृष्ण) के सुन्दर चरणकमलयुगल की वन्दना करता हूँ ।

यहाँ प्रथम चरण के **'वन्दारुवृन्द'** शब्द में **'व' 'न' 'द'** की एक बार आवृत्ति हुई है । द्वितीय चरण में 'न' एवं **'द'** की आवृत्ति हुई है । तृतीय चरण में 'नन्द' की आवृत्ति है, चतुर्थ चरण में 'न' एवं **'द'** व्यञ्जनों की स्वरूप एवं क्रम से समानता है अतः यहाँ वृत्त्यनुप्रास है ।

'श्रीनेहरूचरितम्' एवं **'श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्यम्'** में कवि ने अनुप्रास का अत्यधिक प्रयोग किया है ।

श्रीनेहरूचरितम् में कवि कहता है कि धीरवर (नेहरू) देशोद्धार के सम्बन्ध में (स्थान-स्थान से) आए हुए नवीन-नवीन नेताओं से विचार-विमर्श करते थे—

देशोद्धृतौ बहुविधं व्यतनोद्विचारं
प्रत्यागतैर्नवनवैर्जननेतृभिश्च ।[2]

यहाँ **'नवनवैः' में 'न' 'व'** की स्वरूप एवं क्रम से एक ही बार आवृत्ति हुई है । **'जननेतृभिः'** में 'न' की एक बार आवृत्ति हुई है । अतः यहाँ छेकानुप्रास है ।

'श्रीजवाहरलालवसन्तसाम्राज्यम्' में भी कवि ने अनुप्रास का सुन्दर प्रयोग किया है—

---

१. जवाहर-तरङ्गिणी, श्लोक १ ।

२. श्रीनेहरूचरितम्, १०।८ ।

स्फुटं कुवर्णानि सुमानि या दधे
परैः परीता परितः पुरा परम् ।
शुचीन्यनेनाऽद्य ससार सारसा
रसालिना लीनरसालिना रसा ॥[1]

इसके द्वितीय चरण में 'प' 'र' एवं 'त' व्यञ्जनों की, तृतीय चरण में 'स' एवं 'र' व्यञ्जनों की तथा चतुर्थ चरण में '**रसालिना**' पद की एक बार आवृत्ति हुई है । अतः यहाँ वृत्त्यनुप्रास है ।

श्लेष—कवियों ने श्लेष का भी सुन्दर प्रयोग किया है। '**जवाहर-तरंगिणी**' में श्लेष का प्रयोग दर्शनीय है—

स्वातन्त्र्यसङ्गर-महार्णव-मन्थनोत्थं
राष्ट्राङ्ग-भंगकरमार्तजन-प्रणाशम् ।
हालाहलं हि तदवाञ्छितघोरपाक-
स्थानं त्वया कथमहो सहसा निगीर्णम् ॥[2]

अर्थात्—अरे तुमने अकस्मात् ही स्वतन्त्रता-संग्राम रूपी महासागर के मन्थन से उत्पन्न होने वाले राष्ट्र के अङ्ग को भङ्ग करने वाले दुःखीजनों को नष्ट करने वाले उस अनभीष्ट घोर पाकिस्तान रूपी विष को कैसे पी लिया ।

यहाँ '**अवाञ्छितघोरपाकस्थानम्**' इस पद में श्लेष है—(१) **अवाञ्छितानां घोरपाकानां स्थानम्** (२) **अवाञ्छितं घोरं पाकस्थानं यस्मिन् तत्** । प्रथम अर्थ प्राणापहरण रूप भयानक भोजन विष की ओर संकेत करता है और द्वितीय अर्थ विभाजन के समय बनने वाले अनभीष्ट पाकिस्तान व देश रूपी विष की ओर संकेत करता है ।

'**श्रीनेहरूचरितम्**' में भारत की दशा के वर्णन में श्लेष का सुन्दर प्रयोग है—

नित्यं कराघातमुपासमाना
मानं विनोद्वेगसहा भवन्ति ।
धीशालिनोऽपि व्यथिताः सदैव
स्वान्तेऽपि शान्ति न मनाग् लभन्ते ।[3]

---

१. श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्यम् २।५२ ।
२. जवाहर-तरङ्गिणी, श्लोक ३५ ।
३. श्रीनेहरूचरितम्, ८।१६ ।

अर्थात् (यहाँ के लोग) नित्य ही **'कराघात'** (१. कर—हाथ के आघात—थप्पड़ घूंसे २. कर—टैक्सों का बोझ) का सामना करते हुए, बिना सम्मान के (अपने) आक्रोश को दबा जाते हैं और बुद्धिमान् होने पर भी सदा व्यथित रहते हैं और अपने मन में जरा भी शान्ति नहीं पाते हैं।

इस श्लोक में **'कराघात'** पद से हाथ के आघात-थप्पड़ घूंसे और **'कर-टैक्स'** दोनों अर्थ अभिप्रेत हैं। अतः यहाँ श्लेष है।

'श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्यम्' तो श्लेषमय ही है—

गांधीवरं पूजयिता च भारतीं
स्वराज्यलाभेन विनोदिताखिलः।
स्वजन्मना सौख्यकरो द्विजन्मनां
विराजते ज्वाहरलालमाधवः।[1]

जो गांधी जी का, भारत भूमि का और विद्वानों का पुजारी है और जिसने स्वराज्य-लाभ से, अपने जन्म से सबको प्रसन्न किया है और जो ब्राह्मणों को सुख पहुँचाने वाला है, वह जवाहरलाल रूपी वसन्त शोभित हो रहा है।

यहां **'द्विजन्मनाम्'** के दो अर्थ हैं—**'पक्षी'** एवं **'जवाहरलाल'**। अतः यहाँ श्लेष है।

यमक—कवियों ने **'यमक'** का भी पर्याप्त प्रयोग किया है। **'जवाहर-जीवनम्' 'श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्यम्'** एवं **'नेहरूयशःसौरभम्'** में यमक का पर्याप्त प्रयोग है।

'जवाहर-चिन्तनम्' के प्रस्तुत गीत में यमक का सुन्दर प्रयोग है—

प्रतीची न भूमहिषी प्राचीनदासी
प्राची न दासी।[2]

नेहरू ने दिल्ली नगर में सम्मिलित एशिया-राष्ट्र-परिषद् को सम्बोधित करते हुए कहा कि प्रतीची अर्थात् पाश्चात्य सदा भूमि के स्वामी रहे हैं और एशिया प्राचीनदासी अर्थात् पुरातनकाल से दासीरूपेण रहा है ऐसी बात नहीं है। प्राची न दासी अर्थात् प्राचीन (एशिया) प्राचीन दासी अर्थात् पुराने काल की दासी नहीं है। यहाँ प्राचीन दासी पद के वर्णों की आवृत्ति

---

१. श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्यम् १।४।
२. जवाहर-चिन्तनम्, पूर्व-जवाहर, गीत ३२।

उसी क्रम से हुई है और एक का अर्थ है **'पुरानी दासी'** एवं दूसरे का अर्थ है **'प्राची दासी नहीं है'** अतः यहाँ यमक है।

'जवाहर-जीवनम्' चम्पू के प्रस्तुत वृत्तगन्धि-गद्यांश में कमला शब्द के प्रयोग में यमक अलकार का चमत्कार दर्शनीय है—

'गम्भीरक्षीराब्धिजया कमलया इव काश्मीरजया विमलया कमलया जवाहरोऽशोभत'।[1]

अर्थात्—गम्भीर क्षीराब्धि से उत्पन्न लक्ष्मी के समान, कश्मीर से उत्पन्न कमला से श्री जवाहर शोभायमान होने लगे।

यहाँ **'कमला'** पद की आवृत्ति है किन्तु एक **'कमला'** का अर्थ **'लक्ष्मी'** है और दूसरा **'नाम'** रूप में प्रयुक्त हुआ है। यह सव्यवधान यमक है।[2]

अर्थालंकार—

अतिशयोक्ति—नेहरू-विषयक संस्कृत-वाङ्मय में अतिशयोक्ति का प्रयोग सर्वाधिक हुआ है। 'जवाहर-तरंगिणी' में कवि कहता है कि तुम्हारे आवेशपूर्ण वाक्यों से रचित, हितकर, अंग्रेजी भाषण को सुनकर गौरवर्ण अंग्रेज लोग भी अपनी भाषा में तुम्हारे प्रभुत्व को जानकर लज्जा से कृष्ण-वर्ण मुख वाले से प्रतीत होते हैं—

सावेशवाक्यघटितं हितमाङ्ग्लभाषं
श्रुत्वा मनोज्ञमभिभाषणमाङ्ग्ललोकाः।
तद्वाक्प्रभुत्वमवगत्य च तावकीनं
लज्जामलीमसमुखा इव भान्ति गौराः।[3]

प्रस्तुत पद्य के **'लज्जामलीमसमुखा इव भान्ति गौराः'** इस चरण में अतिशयोक्ति है। अंग्रेजों के गौरवर्ण का लज्जा से काला हो जाना चमत्कारिक है।

---

१. जवाहर-जीवनम्, पृष्ठ संख्या २६।

२. दण्डी ने काव्यादर्श ३।१ में व्यवधान सहित **'यमक'** स्वीकार किया है।

३. जवाहर-तरङ्गिणी, श्लोक ५६।

कवि ने कृष्ण वर्णों के भारतीयों का गौरत्व बताया है। भारत का सुयश जो चिरपारतन्त्र्य से क्षीण हो गया था तुम्हारे (नेहरू के) यश से शुभ्र हो गया है। अतः श्याम वर्ण भारतीय भी गौरत्व को प्राप्त हुए—

यद् भारतस्य सुयशश्चिरपारतन्त्र्य-
क्षीणं त्वया स्वयशसा सममेव शुभ्रम् ।
स्फारीकृतं जगति वीक्ष्य हि भारतीयाः
कृष्णानना अपि लभेमहि गौरवर्णम् ।[1]

अर्थात्—जो तुमने चिरकाल की पराधीनता से क्षीण हुए भारत के शुभ्र सुयश को अपने यश के साथ-साथ ही इस संसार में बढाया है उसे देखकर हम भारतीय कृष्ण मुख वाले होते हुए भी गौरवर्ण अर्थात् दीप्ति को प्राप्त करते हैं या गौरव ऋण को तुमसे प्राप्त करते हैं।

यहाँ कवि ने काव्य परम्परा का निर्वाह करते हुए यश को धवल माना है। नेहरू का शुभ्र यश ही श्याम वर्ण भारतीयों के गौर वर्ण का कारण है, यह अतिशयोक्ति है।

'जवाहर-चिन्तनम्' में भी अतिशयोक्ति का बहुत सुन्दर प्रयोग हुआ है। महात्मा गान्धी को श्रद्धांजलि देते हुए नेहरू जी कहते हैं कि महात्मा जी की स्तुति के लिए कोई शब्द नहीं है, यह सरस्वती व्यर्थ ही प्रयत्न कर रही है—

सरस्वतीयं प्रयतते वृथा
न शब्दकोशा अर्थवाहकाः ।[2]

यहाँ सरस्वती का व्यर्थ प्रयत्न अतिशयोक्ति का सुन्दर उदाहरण है।

'श्रीनेहरूचरितम्' में कवि मोतीलाल जी के वैभव का वर्णन करता हुआ कहता है कि वह अपनी लक्ष्मी से धनपति कुबेर का भी उपहास सा उड़ाते थे—

कुबेरमपि वित्तेशं श्रिया चान्वहसन् मुदा ।[3]

---

१. जवाहरतरङ्गिणी, श्लोक ५७।

२. जवाहर-चिन्तनम्, उत्तर-जवाहर गीत ३६।

३. श्रीनेहरूचरितम्, २।१५।

यहाँ कुबेर का उपहास उड़ाना अतिशयोक्ति है।

इस प्रकार इस काव्य में अतिशयोक्ति के अनेक उदाहरण हैं।

'नेहरूयशःसौरभम्' में भी अतिशयोक्ति का बहुत सुन्दर प्रयोग हुआ है। **'जवाहर-जीवनम्'** में अतिशयोक्ति का सुन्दर प्रयोग है। **'कमला-परिणय'** प्रसंग अतिशयोक्ति का सुन्दर उदाहरण है।[1]

'गीत-जवाहरम्' में वर्णित अतिशयोक्ति का आकर्षक प्रयोग देखिए—

त्वामन्तरेण गङ्गायमुने हि शून्ये
वैधव्यमुपगता देव ! सरस्वती सा ।
धारात्रयस्य सङ्गम इव त्वयि प्रयागे
ब्रह्म-स्वभू-महेशनामंशवृन्दम् ।[2]

अर्थात्—तुम्हारे बिना गङ्गा और यमुना शून्य है। हे देव ! तुम्हारे बिना वह सरस्वती भी विधवा हो गई है। जिस प्रकार प्रयाग में तीनों धाराओं का सङ्गम है उसी प्रकार तुममें ब्रह्मा, विष्णु एवं महेश के अंशों का समूह है।

अतिशयोक्ति का प्रयोग **'श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्यम्'** में भी प्रचुरता से हुआ है। कवि ने गांधी के लिए कल्पद्रुम विशेषण का प्रयोग किया है—

पुन्नागमाहुः समरेऽमरास्त्वां
निगद्यसे शान्तिधनैः शमीत्वम् ।
तथाऽपि विज्ञाः फलनात्फलानां
त्वां गान्धि ! कल्पद्रुममामनन्ति ।[3]

अर्थात् युद्ध में देवता तुम्हें पुन्नाग अर्थात् श्रेष्ठ हाथी कहते हैं। शान्ति ही जिनका धन है ऐसे योगियों के द्वारा तुम शमी अर्थात् शम शान्ति से

१. जवाहर-जीवनम्, पृ० २८।

२. गीत-जवाहरम्, पृ० १२।

३. श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्यम्, २।६५।

युक्त कहे जाते हो। फिर भी तत्त्वज्ञानी फलित होने के कारण तुम्हें गांधी रूपी कल्पवृक्ष मानते हैं।

स्वतन्त्रता रूपी फल की प्राप्ति कराने के कारण गांधी जी को कल्पद्रुम कहा गया है।

उपमा—नेहरू-विषयक-संस्कृत-वाङ्मय में उपमा का प्राचुर्य है। **'श्रीनेहरू-चरितम्'** में कवि का उपमासौष्ठव दर्शनीय है।

इनकी उपमा सुन्दर एवं सरल है। इनमें नवीन कल्पना है, यथा भारत की परतन्त्रता के वर्णन में कवि ने भारत की उस पटरानी से तुलना की है जो दासी बना दी गई हो—

अस्माकमेव सुचिरस्य विरोधभावाद्
दुर्दैव-दूषित-दुराग्रह-पारवश्यात्।
नानानियन्त्रणवती भरतस्य भूमि-
र्दासीकृता नरपतेर्महिषीव जाता।[1]

अर्थात् हमारे ही पुराने (पारस्परिक) विरोध के कारण, दुर्भाग्य के दूषित दुराग्रह-जन्य पारतन्त्र्य के कारण अनेक यन्त्रणाओं से (निगडित) भारत-भूमि (किसी) राजा की उस पटरानी के समान हो गई जिसे दासी बना दिया हो।

प्रस्तुत श्लोक में उपमेय—भारतभूमि, उपमान—राजा की पटरानी, उपमावाचक शब्द—इव, सामान्यधर्म—दासीकृता है। यहाँ उपमा के चारों अङ्ग विद्यमान हैं, अतः यह **'पूर्णोपमा'** का उदाहरण है।

कवि भारतभूमि की तुलना शत्रुओं के फन्दे में पड़ी ललना से करता है।

वीरत्व भाव से रहित यह अभिराम (सुन्दर) वसुधा (भारतभूमि) शत्रुओं के फन्दे में पड़ी हुई सुन्दर ललना की भान्ति सुशोभित नहीं होती थी—

वीरत्वभावरहिता वसुधाभिरामा
रामेव शत्रु-वशगा नितरां न रेजे।[2]

---

१. श्रीनेहरूचरितम्, १।२४।

२. श्रीनेहरूचरितम् १।२६।

प्रस्तुत श्लोक में उपमेय—वसुधा (भारतभूमि), उपमान—रामा, उपमा-वाचक शब्द—इव एवं सामान्यधर्म—शत्रुवशगा है, अतः यहाँ पूर्णोपमा है।

'नेहरूयशःसौरभम्' में कवि गर्भवती स्वरूपरानी की तुलना समृद्ध रत्न भरी पृथ्वी से करता हुआ कहता है कि वे सुधा रस को प्रवाहित करने वाले वचनों से अभिराम तथा दिव्य प्रभाव से परिष्कृत एवं लोक को आनन्द देने वाले शिशु को गर्भ में धारण किये हुए रत्नों से समृद्ध वसुधा के समान शोभित हो रही थी—

दिव्य-प्रभावेण परिष्कृता सा
सुधारसष्यन्दि-वचोभिरामा ।
लोकाभिरामं जठरे दधाना
समृद्धरत्ना वसुधेव रेजे ।[1]

यहाँ उपमेय-सा (स्वरूपरानी), उपमान—वसुधा, उपमावाचक शब्द इव एवं साधारणधर्म समृद्धरत्ना है। अतः यहाँ भी पूर्णोपमा है।

कवि की यह बहुत ही अनूठी एवं सटीक उपमा है।

विलाप करती हुई इन्दिरा की तुलना मलिनोदयश्री वाली प्रभा से करता हुआ कवि कहता है कि जिस प्रकार अमावास्या के अन्त में, सम्पूर्ण ग्रहण होने पर मलिन उदय-श्री वाली प्रभा, चारों ओर से सूर्य से लिपट जाती है, उसी प्रकार विलाप करती हुई मलिनोदयश्री प्रियदर्शिनी पिता से लिपट गई—

विलप्यमाना प्रियदर्शिनी सा
पितुः शरीरं विकलाऽऽलिलिङ्ग।
अमान्त-पूर्णग्रहणे प्रभेव
सूर्यं समन्तान्मलिनोदयश्रीः ॥[2]

'जवाहर-जीवनम्' में उपमा का प्रयोग सबसे अधिक हुआ है। कवि ने पुत्रहीन मोतीलाल की तुलना दिलीप से की है।

जिस प्रकार पुत्रार्थी दिलीप स्वधर्मपत्नी सुदक्षिणा के साथ अपने गुरु श्री वसिष्ठ जी के आश्रम में गए थे उसी प्रकार श्री मोतीलाल जी भी अपनी धर्म-

---

१. नेहरूयशःसौरभम्, २।१०।

२. वही ११।२५।

पत्नी स्वरूपा सहित, पुत्रार्थी, सदाचार-परायण, नित्य जिज्ञासु, तपस्वियों के आश्रमों में जाते थे—

यथा दिलीपः स्वाचार्यं सदारो गतवांस्तदा ।
तथैव मोतीलालोऽयमगच्छद्धि तपस्विषु ॥
नित्यान्वेषण-संलग्नः श्रद्धा-भक्ति-समन्वितः ।
सदा सदारः पुत्रार्थी सदाचार-परायणः ॥[1]

जैसे गुरु वसिष्ठ की धेनु नन्दिनी की सेवा में महाराज दिलीप रहते थे, उसी प्रकार मोतीलाल जी भी दिन-रात ऋषि के प्रसन्न होने तक सेवा में लगे रहे—

गुरोर्धेनुं वसिष्ठस्य दिलीपो नन्दिनीं यथा ।
अहर्निशमन्वगच्छन्मोतीलालस्तथैव हि ॥[2]

'काश्मीर-सुषुमा' की कुछ पंक्तियाँ तो कालिदास की उपमा-समृद्ध पंक्तियों से उपमित होने के लिए व्याकुल हो रही हैं—

शूरगौरवनीरं हि गौर-पाटीर-सौरभम् ।
शुभ्रं क्षीराब्धिहिण्डीरं हंसं मानसतीरजम् ॥
स्वल्पबुद्धिरहं जातो लेखने चातिदुस्तरे ।
परमत्राफलोऽप्येवं भविष्यामि प्रशंसितः ॥
चरित्र-गौरवेणैव प्रयासः सफलो मम ।
दन्तभंगो हि नागानां श्लाघ्यो गिरि-विदारणे ॥[3]

अर्थात् शौर्य-गौरव के जल से भरे, श्वेत चन्दन के समान यश-सौरभ से सुवासित, समुद्र सम गम्भीर, क्षीर सागर की फेन के समान सफेद, मान सरोवर के हंस चरित्र का वर्णन करने चला हूँ। स्वल्प बुद्धि मैं इस चरित्र लेखन कार्य में प्रवृत्त हूँ। इस दुस्तर कार्य में असफल हुआ भी प्रशंसित होऊंगा, चरित्र गौरव से ही मेरा प्रयास सफल होगा, क्योंकि पर्वत तोड़ने में हाथियों के दांत तोड़ना भी श्लाघ्य ही होता है।

---

१. जवाहर-जीवनम्, पृ० १७ ।
२. वही, पृ० १८ ।
३. वही, पृ० ३३-३४ ।

इसके अतिरिक्त 'जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्' में चकोरी से कमला की तुलना बहुत ही उपयुक्त है—

चकोरीव भवतः चन्द्रमुखं प्रेक्षते ।[1]

अर्थात् (कमला) चकोरी के समान आपके चन्द्रमुख की प्रतीक्षा करती है ।

'श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्य' में कवि ने गांधी जी को कल्पद्रुम वृक्ष की भाँति ही लोगों की इच्छाओं को पूर्ण करने वाला बताया है—

दिव्यं पत्रचयं बिभर्ति खलु यः सर्वर्तुरम्यः फलै-
र्नित्यं पक्षधरैः शकुन्तनिवहैः संसेव्यते यः परैः ।
दत्ते मानसवाञ्छितं तनुभृतां बिभ्रच्छवि नन्दने
सोऽयं राजति राजराजमहितः श्रीगान्धिकल्पद्रुमः ।[2]

अर्थात् फलों के द्वारा जो सब ऋतुओं में रमणीय है, तथा जो पत्तों (पत्रों) के दिव्य समूह को धारण करता है, नित्य ही जो पंखों को धारण करने वाले पक्षी रूपी अन्य व्यक्तियों के समूह के द्वारा सेवित होता है। नन्दन वन में (प्रसन्नता में) शोभा धारण करता हुआ सभी शरीर धारियों को अभिलषित पदार्थ देता है, राजाओं के राजाओं द्वारा पूजित वह यह गान्धी रूपी कल्पवृक्ष सुशोभित हो रहा है ।

इस प्रकार कवियों की उपमायें सरस, प्रभावी एवं रमणीय हैं ।

रूपक—नेहरू-विषयक संस्कृत-वाङ्मय में रूपक का प्रयोग भी यत्र-तत्र उपलब्ध होता है । 'नेहरूयशःसौरभम्' में कवि कहता है कि उस विद्वान् का विवेक रूपी पंखों वाला यश रूपी हंस आकाश में विहार करता हुआ सत्पुरुषों के आश्रय सम्राट् फारूक सियार के रसान्वित मानस (मन) (मानसरोवर) में पहुँच गया—

विपश्चितस्तस्य विवेक-पक्षति-
र्यशो-मरालो विहरन् नभस्तले ।

---

१. जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्, पृ० १० ।

२. श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्यम्, २।६४ ।

अवाप 'फर्रुकसियार' भूपते-
रसान्वितं मानसमाश्रयं सताम् ।[1]

प्रस्तुत श्लोक में विद्वान् पर विवेक रूपी पंखों का एवं हंस पर यश का आरोप है।

'गान्धिबान्धवम्' में भी रूपक का प्रयोग दिखलाई देता है—

'तवास्ति मुखचन्द्रमाः'[2] अर्थात् तुम्हारा मुख चन्द्रमा है।

यहाँ मुख पर चन्द्रमा का आरोप है। रूपक के अन्य भी अनेकों उदाहरण इस साहित्य में उपलब्ध होते हैं।

उत्प्रेक्षा—'श्रीनेहरूचरितम्' में नेहरू की वेशभूषा के वर्णन-प्रसंग में कवि कहता है कि गुलाब के समान कमला उनके (नेहरू के) हृदय में निवास करती थी, मानो उसकी स्मृति में वे स्थल-पद्म (गुलाब) धारण करते थे—

'कमला' वसति स्मास्य हृदये स्थल-पद्मिनी ।
मन्ये तस्माद्धाराऽसौ तत्स्मृतौ स्थल-पद्मकम् ॥[3]

यहाँ कवि उत्प्रेक्षा करता है कि नेहरू का गुलाब धारण करना कमला की स्मृति का प्रतीक है।

उत्प्रेक्षा का सुन्दर उदाहरण भारतीय शूर वीरों के रक्त से रञ्जित हिमालय के वर्णन-प्रसङ्ग में भी दिखलाई देता है। इधर-उधर गिरे हुए सैनिकों के गाढ़े रक्त से लाल हिमालय ऐसा लग रहा था मानो बाण से आहत मानसरोवर का राजहंस पृथ्वी पर मूर्छित पड़ा हो—

इतस्ततो विक्षतसैनिकानां
प्रगाढरक्तारुणितो हिमाद्रिः ।
मन्ये विसंज्ञः पतितो धरायां
शराहतो मानसराजहंसः ॥[4]

---

१. नेहरूयशःसौरभम्, १।३५ ।
२. गन्धिबान्धवम्, २३वां श्लोक ।
३. श्रीनेहरूचरितम्, १८।४० ।
४. नेहरूयशःसौरभम्, १०।१८ ।

नेहरू के बालपन के वर्णन में कवि कहता है कि अपने बल से तथा संचित साधन से उठने की इच्छा करता हुआ और गिरता हुआ यह बालक मानो भविष्य में संघर्ष मार्ग से गिरकर उठने की क्रिया का अभ्यास कर रहा है—

उत्थातुमिच्छन् स्वबलेन भूयः
पतन्नसौ सञ्चितसाधनेन ।
भविष्य-संघर्षपथे निपातो-
त्थान-क्रियाभ्यासमिवाचचार ॥[1]

यहाँ कवि ने उत्प्रेक्षा की है कि नेहरू के बालपन की गिरकर उठने की क्रिया नेहरू के भविष्य के संघर्ष की द्योतक है। यह बहुत सुन्दर काव्यात्मक वर्णन है ।

अर्थान्तरन्यास—'नेहरूयशःसौरभम्' के—

सत्याग्रहे पुनर्यातः कारागारं जवाहरः ।
विरमन्ति न बाधाभिः साधवः साध्य-दर्शिनः ।[2]

इस श्लोक में 'साधवः साध्यदर्शिनः' इस सामान्य का विशेष नेहरू से साधर्म्य होने के कारण अर्थान्तरन्यास है। इसी प्रकार अन्य भी अनेक स्थलों पर अर्थान्तरन्यास का सुन्दर प्रयोग हुआ है ।

अप्रस्तुतप्रशंसा—'नेहरूयशःसौरभम्' के—

सतामुदारा प्रकृतिः खलानां
कृते सदाभूदुपतापहेतुः ।
अहस्करो विश्वतमोऽपहारी
नोलूकचेतः प्रमुदं करोति ॥[3]

अर्थात् सज्जनों की उदार प्रकृति दुष्टों के लिए सदा सन्ताप का कारण होती है । संसार के अन्धकार का हरण करने वाला सूर्य उल्लू के हृदय को प्रसन्न नहीं कर पाता ।

प्रस्तुत श्लोक में अप्रस्तुतप्रशंसा है। यहाँ उल्लू का चित्त प्रसन्न नहीं

१. नेहरूयशःसौरभम् २।२० ।
२. वही, ७।२४ ।
३. वही, १०।७ ।

होता, इस सामान्य बात से अप्रस्तुत विशेष चीन का प्रसन्न न होना द्योतित होने से अप्रस्तुतप्रशंसा है।

विरोध—विरोध अलंकार का भी सुन्दर उदाहरण **'नेहरूयशःसौरभम्'** में मिलता है। नेहरू की दूरदर्शिता के प्रसङ्ग में कवि कहता है कि जीवन में सफलता पाने वाले उनके नेत्रों की कान्ति वृद्धता के कारण, जैसे-जैसे क्षीण होती गई, वैसे-वैसे जीवन-दर्शन में वे महानुभाव (नेहरू) दूरदर्शी होते चले गए—

जरा प्रभावेण यथा-यथास्य
क्षीणोपजाता कृतिनो दृशः श्रीः।
तथा-तथा जीवनदर्शनेऽसौ,
महानुभावोऽजनि दूरदर्शी ॥[1]

स्वभावोक्ति—जवाहर-तरङ्गिणी में कवि ने नेहरू की बालोचित सादगी का वर्णन बहुत स्वाभाविक ढंग से किया है कि मुग्ध गिरिनिवासी एवं वनवासियों के साथ प्रेम में बंध कर तुम नाचते हो। नगर के बालकों के साथ तुम अद्वितीय चंचलता से क्रीड़ाएं करते हो। वेगपूर्वक चलते हुए यान में भी तुम बैठते नहीं हो, इस प्रकार आयु की परिणति से भी तुम्हारा बालभाव नष्ट नहीं हुआ—

गिरिवनचरमुग्धैर्नृत्यसि प्रेमबद्धः
विहरसि पुरबालैश्चापलेनासमेन।
उपविशसि न याने वेगसम्प्रस्थितेऽपि
परिणतवयसा ते नाहृतो बालभावः ॥[2]

प्रस्तुत श्लोक स्वाभावोक्ति का बहुत ही सुन्दर उदाहरण है।

'नेहरूयशःसौरभम्' में कवि नेहरू की मुक्त हंसी का वर्णन करता हुआ कहता है कि वह मुक्त हंसी वाले, दो दांतों वाले चन्द्रमा के तुल्य मुख से, स्नेह रूपी सागर के ज्वार में लोगों के विवश नेत्रों को स्नान कराता था—

स मुक्त-हास्येन रदद्वयेन,
मुखेन राकापति-सन्निभेन।

---

१. नेहरूयशःसौरभम्, ११।६।

२. जवाहर-तरङ्गिणी, श्लोक ४७।

अमज्जयल्लोक-विलोचनानि
स्नेहाम्बुधिज्वारजलेऽवशानि ॥[1]

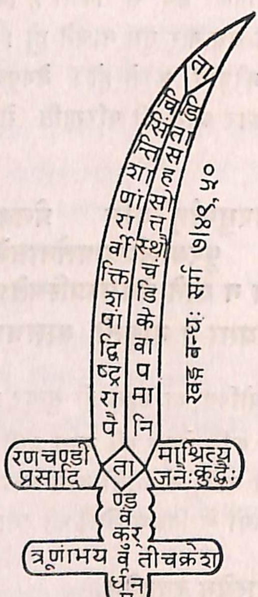
नेहरू जी के शैशव एवं इन्दिरा के बाल्यकाल आदि प्रसङ्गों में स्वभावोक्ति का सुन्दर प्रयोग हुआ है।

'**श्रीनेहरूचरितम्**' '**जवाहर-जीवनम्**' आदि सभी ग्रन्थों में स्वभावोक्ति अलङ्कार उपलब्ध होता है।

यहाँ कुछ प्रमुख अलङ्कारों के विशिष्ट उदाहरण दिए गए हैं किन्तु नेहरू-विषयक संस्कृत-वाङ्मय में अन्य अनेकों अलङ्कारों-व्यतिरेक, वक्रोक्ति, उदात्तालंकार आदि का भी सुन्दर प्रयोग है।

'**नेहरूयशःसौरभम्**' में खड्गबन्ध, त्रिशूलबन्ध, बाणबन्ध, मुशलबन्ध, चक्रारबन्ध एवं चापबन्ध का प्रयोग है—

खड्ग बन्ध



नीत्या राष्ट्रद्विषां शक्ति-
वीराणां शान्ति-सिञ्चिता।

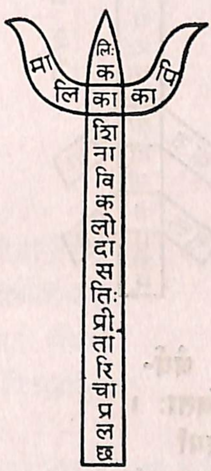
---
१. नेहरूयशःसौरभम्, २।१६।

ताडिता सहसोत्तस्थौ
चण्डिकेवारि - मर्दिनी ॥
तामाश्रित्य जनैः क्रुद्धैः
रणचण्डी प्रसादिता ।
ताण्डवं कुर्वती चक्रे
शत्रूणां भीतिवर्धनम् ॥[1]

अर्थात् राष्ट्र के शत्रुओं की नीति से प्रताड़ित, वीरों की शान्ति से सिञ्चित शक्ति शत्रुओं के मर्दन करने वाली चण्डिका के समान सहसा उठ खड़ी हुई ।

उस शक्ति का आश्रय लेकर क्रुद्ध लोगों के द्वारा प्रसन्न की हुई रणचण्डी ताण्डव करती हुई शत्रुओं का भय वर्धन करने लगी ।

त्रिशूल बन्धः



सर्ग ७ ३७

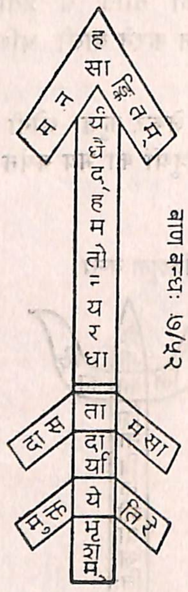
छलप्रचारिता प्रीतिः
सदा लोक-विनाशिका ।

---

१. नेहरूयशःसौरभम्, ७।४९,५० ।

कालिमा-मालिका कापि
पिकाकालिक-काकलिः ॥[1]

अर्थात् छल द्वारा प्रचार की गयी प्रीति सदा लोकविनाशक होती है। कोयल का असमय काकली-स्वर कालिमा (विपत्ति) से भरा होता है।



बाण बन्धः ७/५२

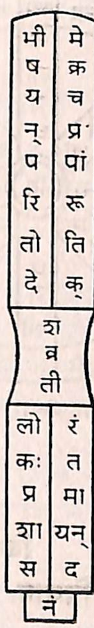
धारयन्तो महद्द धैर्य-
मोजसा साहसार्चिताः ।
दासता-तामसादार्या
मुक्तये येतिरे भृशम् ॥[2]

अर्थात् मन में साहसपूर्ण महान् धैर्य को धारण करते हुए आर्यजन दासता के अन्धकार से मुक्त होने के लिए अत्यधिक प्रयत्नशील हो गए ।

---

१. नेहरूयशःसौरभम् ७।३७।

२. वही, ७।५२।



मुशलबन्धः ७।५४

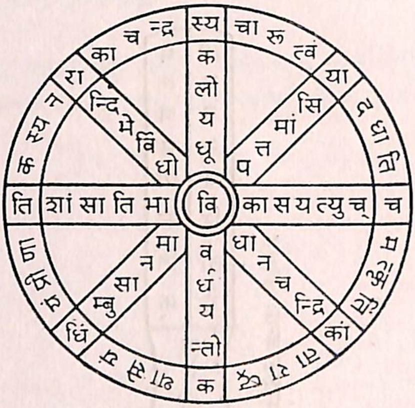
भीषयन् परितो देश-
व्रती लोकः प्रशासनम् ।
नन्दयन् मातरं तीव्र-
शक्तिरूपां विचक्रमे ॥[1]

अर्थात् देश के लिए व्रत धारण करने वाले लोग प्रशासन को चारों ओर से भयभीत करते हुए, और तीव्र शक्तिरूप मातृभूमि को प्रसन्न करते हुए पराक्रम प्रदर्शित करने लगे ।

---

१. नेहरूयशःसौरभम्, ७।५४ ।

अष्ट-चक्रारबन्ध



चक्रार बन्धः १२।७१.७२

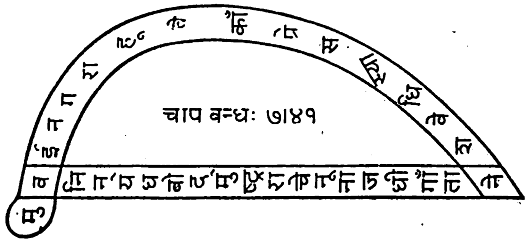
विधूय लोकस्य विपत्तमांसि या
विकासयत्युच्च - विधान चन्द्रिकाम् ।
विवर्धयन्ती कविमानसाम्बुधि
विभाति सा शान्ति-विधोर्विभेन्दिरा ।
राकाचन्द्रस्य चारुत्वं या दधाति चमत्कृतिम् ।
कान्ता राष्ट्रकथा सेयं धियं प्रीणाति कस्य न ? ॥[1]

अर्थात् जो जनता की विपत्ति रूपी अन्धकार को दूर कर उन्नत विधान रूपी चन्द्रिका का निकास करती हैं; कवियों के मानस रूपी समुद्र को बढ़ाती हुई, शान्ति रूपी चन्द्र की प्रभा के समान वह इन्दिरा सुशोभित हो रही है । जो पूर्णिमा के चन्द्रमा तथा (काव्य के) चमत्कार को धारण करती हैं, वह राष्ट्र की रमणीय कथा किसकी बुद्धि को प्रसन्न नहीं करती ।

---

१. नेहरूयशःसौरभम् १२।७१,७२ ।

चाप बन्ध



'मुम्बई' नगराहूते
कांग्रेसस्याधिवेशने ।
नेता 'गांधी' जनानूचे
राष्ट्रमुद्बोधयन्निव ॥[१]

अर्थात् बम्बई में बुलाये गए कांग्रेस के अधिवेशन में महान् नेता गांधी जी ने राष्ट्र को उद्बोधिन करते हुए जनता से कहा ।

छन्द-प्रयोग

नेहरू-विषयक-वाङ्मय में विविध छन्दों का प्रयोग भी बहुलता से मिलता है । छन्द के प्रयोग में प्राचुर्य उपजाति एवं अनुष्टुप् का है।

'जवाहर-चिन्तनम्' में स्रग्धरा, शार्दूल-विक्रीडित, मन्दाक्रान्ता आदि छन्दों का प्रयोग हुआ है । 'जवाहर-जीवनम्' में मुख्यतः अनुष्टुप् छन्द है ।

'नेहरूयशःसौरभम्' में छन्दप्रयोग की विविधता श्लाघनीय है । इसके प्रथम सर्ग में वंशस्थ एवं सर्गान्त में मालिनी छन्द है । द्वितीय सर्ग में उपेन्द्रवज्रा, उपजाति, इन्द्रवज्रा एवं वसन्ततिलका आदि विविध छन्दों का प्रयोग है । इस महाकाव्य में कहीं शार्दूलविक्रीडित है, कहीं मन्दाक्रान्ता तो कहीं द्रुतविलम्बित । कवि ने उपजाति का स्थान-स्थान पर प्रयोग किया है—

पुण्यस्थलीमेष विवेकशीलः ययौ हृषीकेशपद-प्रतिष्ठाम् ।
भागीरथी-निर्मल-नीर-सिक्ता यत्रानिलामोदभरावहन्ति ॥[२]

---

१. नेहरूयशःसौरभम् ७।४१ ।

२. वही, २।३ ।

अर्थात् वे विवेकशील पुरुष ऋषिकेश नाम से प्रतिष्ठित तीर्थ में गए। जहाँ भागीरथी के पवित्र जल से सिक्त, प्रसन्न वायु बहती है।

आर्या छन्द का विलास भी इसमें देखा जा सकता है—

गोविन्दस्य च पित्रोर्ध्यात्वा पादान् मया महादेव्याः ।
'नेहरूयशःसौरभम्' रचितं वाचं समभ्यचर्य ॥[1]

अर्थात् पिता गोविन्द तथा माता महादेवी के चरणों का ध्यान करके एवं वाणी की अर्चना करके मैंने 'नेहरूयशःसौरभम्' काव्य की रचना की है।

'नेहरूयशःसौरभम्' में स्रग्धरा का प्रयोग भी दर्शनीय है—

भूयो बिभ्रत्प्रतापः प्रबलरिपुमदज्वार-विध्वंसकारी
कीर्त्या चन्द्रांशुगौर्या सकलजनमनःकैरवानन्दकारी ॥
कुर्वन् वै भिन्नधर्मानपि सहजसमान् देशिकान् राष्ट्रधर्मे
विष्वग् व्याप्तप्रकाशः, प्रखरकरबलै, राजते भारतोऽयम् ॥[2]

अर्थात्—पुनः प्रताप को धारण करने वाला, प्रबल शत्रु के मद के ज्वार को विध्वंस करने वाला, चन्द्रमा की किरणों के समान उज्ज्वल कीर्ति से समस्त जनों के मनरूपी कुमुदों को प्रसन्न करने वाला, विभिन्न धर्मों वाले देशवासियों को राष्ट्रधर्म में सगे भाइयों जैसा बनाता हुआ प्रखर किरणों (प्रबल हाथों) के बल से चारों ओर व्याप्त प्रकाश वाला यह भारत सुशोभित हो रहा है।

इस साहित्य में छन्द-प्रयोग की विविधता प्रशंसनीय है।

सूक्ति-प्रयोग

संस्कृत के साहित्यिक ग्रन्थ प्रायः सूक्ति समृद्ध हैं। नेहरू-विषयक संस्कृत-कृतियों में भी सरस, रमणीय एवं सारगर्भित सूक्तियाँ काव्य की शोभा-वर्धक हैं। जीवन के विविध विषयों से सम्बद्ध ये सूक्तियां वर्गविशेष

---

१. नेहरूयशःसौरभम्, १२।७६।
२. वही०, १०।३७।

निष्ठ नहीं हैं। कुछ सूक्तियाँ सत्य का उन्मीलन करती हैं, कुछ संस्कृति पर प्रकाश डालती हैं तो कुछ सामाजिक मान्यताओं पर। कुछ सूक्तियों पर कालिदास आदि प्रसिद्ध कवियों का प्रभाव स्पष्ट झलकता है—

१. 'साधु न सर्वं भवति पुराणं नवमपि नूनं रुचिरं निपुणम्'।[1]

अर्थात् सब कुछ पुराना उचित नहीं होता है, नया भी रुचिर और निपुण हो सकता है।

तु०—पुराणमित्येव न साधु सर्वम् (कालिदास, मालविकाग्निमित्र)

२.—स्वभावनम्रा वचने विपश्चितः।[2]

अर्थात् विद्वान् वाणी में स्वभाव से ही नम्र होते हैं।

तु०—भवन्ति नम्रास्तरवः फलागमैः। (अभि० शा०)

३.—ज्वलितं क्षणमात्र-जीवनं प्रथितं वै चिरधूमसञ्चयात्।[3]

अर्थात् देर तक धुएं के सञ्चय से जलता हुआ क्षण भर का जीवन अधिक अच्छा है।

तु०—मुहूर्तं ज्वलितं श्रेयो न च धूमायितं चिरम्।

४.—विरमन्ति न बाधाभिः साधवः साध्यदर्शिनः।[4]

अर्थात् लक्ष्य की ओर ध्यान लगाने वाले सज्जन बाधाओं से रुकते नहीं हैं।

तु०—विघ्नैः पुनः पुनरपि प्रतिहन्यमाना प्रारब्धमुत्तमगुणा न परित्यजन्ति (भर्तृहरि)

५.—पूजास्थानं हि गुणा न वयोमितिः।[5]

---

१. जवाहर-चिन्तनम्, उत्तर-जवाहर, गीत ४६।

२. नेहरुयशःसौरभम्, ४।२२।

३. वही, ६।४०।

४. वही, ७।२४।

५. जवाहर-चिन्तनम्, पूर्वजवाहर, गीत १२।

अर्थात् गुण ही पूजा का स्थान होते हैं, आयु का परिमाण नहीं।

तु०—गुणा पूजास्थानं, गुणिषु न च लिंगं न च वयः (उ० रा०)

६.—पुरुषसिंहमुद्यमिनं यशःश्रीरुपैता।[1]

अर्थात् उद्योगी पुरुष को ही यश श्री प्राप्त होती है।

तु०—उद्योगिनं पुरुषसिंहमुपैति लक्ष्मीः

७.—ज्ञानाद् रूढिर्बलीयसी।[2]

अर्थात् ज्ञान से रूढ़ि बलवान् होती है।

तु०—योगाद्रूढिर्बलीयसी

८.— शक्तिं विना न सफला भवतीह लोकयात्रा।[3]

अर्थात् शक्ति के बिना संसार की यात्रा सफल नहीं होती।

९.— दन्तभंगो हि नागानां श्लाघ्यो गिरि-विदारणे।[4]

अर्थात् पर्वत के विदीर्ण करने के समय यदि हाथियों के दांत टूट जाएँ तो प्रशंसनीय ही है।

१०.— भवन्ति भव्या ननु लोकवल्लभाः।[5]

अर्थात् निश्चय ही वे भव्य पुरुष लोक-वल्लभ होते हैं।

११.— प्रसादिता यज्ञमुखा निलिम्पा भवन्ति वै कामदुघा जनानाम्।[6]

अर्थात् निश्चय ही यज्ञ-मुख वाले देवता प्रसन्न होते हुए लोगों की कामना को पूर्ण कर देते हैं।

---

१. जवाहर-चिन्तनम्, गीत १२।
२. वही०, उत्तर-जवाहर, गीत-६६।
३. श्रीनेहरूचरितम्, १०।१४।
४. जवाहर-जीवनम्, पृ० ३४।
५. नेहरूयशःसौरभम्, १।१४।
६. वही०, २।८।

१२.— सन्तः स्वभावपरदुःखकथाकदर्याः ।[1]

अर्थात् सत्पुरुष स्वभाव से ही दूसरों की दुःखपूर्ण कथा से कातर हो जाते हैं ।

१३.— प्रयत्नसाध्यं क्रियते परिश्रमादुपायमालोक्य विधानसम्मतम् ।
बलाबलं वीक्ष्य विनापि यत्कृतं फलागमे तल्लभते तिरस्क्रियाम् ।[2]

अर्थात् प्रयत्न से सफल होने वाले कार्य को, विधान सम्मत उपाय को देखकर परिश्रम से किया जाना चाहिए । बलाबल को बिना देखे जो किया जाता है, फलप्राप्ति में वह परिश्रम अपमान को प्राप्त होता है (व्यर्थ जाता है) ।

१४.— प्रकृतिः कलुषात्मनामहो सरलं पश्यति वक्रचेष्टया ।[3]

अर्थात् कलुष आत्मा वालों की यह प्रकृति है कि वह सम्भावना को भी वक्र चेष्टा से देखते हैं ।

१५.— क्षमा सतामुच्चगुणाग्रवर्तिनी ।[4]

अर्थात् क्षमा सज्जनों के उच्च गुणों में अग्रणी होती है ।

१६.— स्वभावनम्रा अपि नाम मानिनो
भवन्ति सङ्कल्पकठोरमानसाः ।[5]

अर्थात् मानी पुरुष स्वभाव में नम्र होने पर भी संकल्प में कठोर होते हैं ।

१७.— ये मानवा मनुजतां परिपालयन्तो
राष्ट्रोन्नतौ निजधियं विनियोजयन्ति ।
ते वन्दनीयचरणा उभयत्र नूनं
लब्ध्वा यशोऽतिविमलं सततं जयन्ति ॥[6]

---

१. नेहरूयशःसौरभम्, ४।७ ।
२. वही, ४।१६ ।
३. वही, ५।१० ।
४. वही, ६।६ ।
५. वही, ६।२६ ।
६. श्रीनेहरूचरितम्, १।११ ।

अर्थात् जो पूज्यपाद मानव मानवता का परिपालन करते हुए राष्ट्र की उन्नति में अपनी बुद्धि को जुटा देते हैं—वे इस लोक और परलोक में निश्चय ही नितान्त अवदात कीर्ति को प्राप्त करके जय प्राप्त करते हैं।

चरित्र निर्माण में सहायक ऐसी अनेकों सूक्तियों ने इस साहित्य की उपादेयता में वृद्धि की है।

लोकोक्तियाँ—नेहरू-सम्बन्धी संस्कृत-साहित्य में यत्र-तत्र लोकोक्तियाँ भी सुशोभित हो रही हैं—

१. व्योमपुष्पायिता।[1]

अर्थात् आकाश पुष्प।

२. घृतमिव ज्वलिते दहने तदा।[2]

अर्थात् जलती हुई अग्नि में घी के समान।

३. अजीर्णे भोजनम्।[3]

अजीर्ण रोग भोजन को (निष्फल कर देता है)

४. न तिमिङ्गिलपुच्छपातनव्रजति व्याकुलतां पयोनिधिः।[4]

अर्थात् बड़ी-बड़ी मछलियों की पूँछों के आघात से समुद्र व्याकुल नहीं होता।

ये लोकोक्तियाँ भाषा में प्रवाह उत्पन्न करने में समर्थ हैं।

भाषा-शैली

आधुनिक युग में पाण्डित्य प्रदर्शन की अपेक्षा सरलीकरण की अधिक आवश्यकता है। इस तथ्य को प्रायः सभी कवियों ने समझा है। अतः नेहरू विषयक प्रायः सभी ग्रंथों में वैदर्भी रीति का प्रयोग स्वाभाविक रूप से ही है। ये सभी रचनाएँ प्रसादगुणयुक्त हैं। इनमें समासों की संक्षिप्तता, सन्धियों की सरलता है। सामान्य संस्कृत का ज्ञान रखने वाला व्यक्ति भी उन्हें सुखपूर्वक समझ सकता है। इन ग्रन्थों की शैली स्पष्ट, प्रभावशाली एवं प्रवाहमयी

---

१. नेहरूयशःसौरभम्, ७।२२।
२. वही०-५।१४।
३. वही०-७।१८।
४. वही०।

है। २०वीं शताब्दी में लिखे गए इन काव्यों में परिस्थिति का पूर्णरूपेण ध्यान रखा गया है।

यद्यपि प्राय: ग्रन्थों की शैली सरल है तथापि कुछ ग्रन्थों की भाषा क्लिष्ट हो गई है। 'श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्यम्' में कवि ने श्लेष का अत्यधिक प्रयोग किया है। अत: भाषा श्लिष्ट है। कवि ने १२वीं शती में रचित **'नैषधीय-चरितम्'** का अनुकरण करने का प्रयत्न किया है। फलत: उनकी भाषा पण्डितवर्ग के योग्य एवं जनसामान्य के लिए किंचित् दुरूह हो गई है। कवि ने छन्दपूर्ति के लिए कहीं-कहीं **'ज्वाहरलाल'** प्रयोग किया है।

'जवाहर-तरङ्गिणी' की भाषा सरल एवं प्रवाहमयी है। इसका पदविन्यास सुललित है। विविध अलंकारों के प्रयोग से यह काव्य आकर्षक बन गया है। प्रसाद एवं माधुर्यगुणयुक्त यह काव्य सहृदय को आकर्षित करने में समर्थ है।

प्रसादगुणयुक्त, लालित्यपूर्ण शब्दावली में रचित **'गान्धिबान्धवम्'** का भाषा-सौष्ठव भी अपूर्व है। इस ग्रन्थ में होटल, इंग्लिशविदां आदि अंग्रेजी शब्दों का भी पर्याप्त प्रयोग है। किन्तु समाज में प्रचलित होटल आदि शब्द अब हिन्दी के ही अंग बन चुके हैं। अत: कवि ने ग्रन्थ की सरलता को दृष्टि में रखकर इन शब्दों का प्रयोग किया है।

'शान्तिदूत:' इस ग्रन्थ की भाषा किंचित् क्लिष्ट है। छन्दपूर्ति के लिए कवि कहीं-कहीं **'जुह्वारलाल'** शब्द का प्रयोग भी करता है। इसका नायक धीरोद्धत है।

समस्तपद रहित, माधुर्यगुणयुक्त **'अन्तिम-यात्रा'** की भाषा गम्भीर एवं सशक्त है—

कोऽयं वाऽन्यतमस्तथा सजलदृग्दूरे स्थित: सेवक:
द्रष्टुं नेच्छति पूर्ववच्चिरनवं देहं तु जीवं विना।
पृच्छत्यद्य कदाचिदेष जरठो दद्यां सुमं लोहितं
कस्मै रम्यमत: परं वन्दति वा 'काल: कियान्निष्ठुर:'।[1]

अर्थात् सजल नेत्रों वाला दूर खड़ा हुआ यह कौन दूसरा सेवक है जो जीव-रहित पहले के समान चिर नवीन देह को अब नहीं देखना चाहता। यह वृद्ध कदाचित् पूछ रहा है कि लाल गुलाब इसके पश्चात् मैं किसे दूंगा या

१. अन्तिम-यात्रा, श्लोक-३।

वह अपने स्वामी को प्रणाम कर रहा है, ओह ! काल कितना निष्ठुर है।

सूत्र-शैली में रचित **'नेहरू-सूत्राणि'** की भाषा अत्यन्त सरल है। अल्प संस्कृतज्ञ भी सरलता से इसे समझ सकता है, यथा—विदेशे-अध्ययनम्, मंगलमय-परिणयः इत्यादि।

'गीतजवाहरम्' सरस, आकर्षक, सुगम एवं व्यर्थ के शब्दाडम्बर से दूर है—

भरतभूमिरवे ! क्व गतोऽद्य हा
जनसुधारक ! विज्ञ ! विना त्वया
तिमिरमद्य चतुर्दिशि विद्यते
वसुमती शुभमम्बरमन्तरा।[1]

अर्थात् हे भारत भूमि के सूर्य ! आज तुम कहाँ चले गये हो। हे जनता को धारण करने वाले ! हे विज्ञ ! तुम्हारे बिना चारों दिशाओं में आज अन्धकार है। यह पृथ्वी भी आज शुभ्र वस्त्र के बिना दिखाई दे रही है।

अलंकृत भाषा में रचित **'जवाहर-चिन्तनम्'** के गीतों में गेयता है। विविध रागों से युक्त ये गीत बहुत आकर्षक हैं। कवि द्वारा रागों के संकेत से उनका संगीतशास्त्र का ज्ञान परिलक्षित होता है। इसकी भाषा सुन्दर एवं रम्य है।

'जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्' की भाषा सरल, आकर्षक, सरस एवं प्रवाहमयी है। अल्प संस्कृतज्ञ भी इस नाटक का आनन्द ले सकता है। इसमें अंग्रेजी शब्दों का प्रयोग प्रचुर मात्रा में मिलता है। यथा—सुपरिटेन्डेन्ट, ओ गॉड, फोन इत्यादि। लेखक ने सामान्य व्यवहार की भाषा को ही रखा है। भाषा पात्रानुरूप एवं परिस्थिति के अनुकूल है। संवाद स्वाभाविक एवं रोचक हैं। नाटक रंगमंच के सर्वथा योग्य है।

प्रसादप्रिय वैदर्भी रीति में, अलंकृत शैली में रचित 'श्रीनेहरूचरितम्' की भाषा सुबोध एवं शब्द-चयन रमणीय है। समयानुकूल ही भाषा का प्रयोग हुआ है। अन्तिम सर्ग के इन्दिरा-विलाप के कारुणिक प्रसंग में मार्मिक शब्दों का प्रयोग किस सहृदय को नहीं रुला देगा।

---

१. गीत-जवाहरम्, पृ० ७०।

कुररीव रुरोद सा भृशं पितुरङ्के विनिपत्य निर्दयम्
समुपेत्य विधेर्विडम्बनां विनिकृत्तेव लता तरोरधः।[१]

'जवाहर-जीवनम्' प्रौढ़ एवं प्राञ्जल भाषा में लिखा गया एक सुन्दर चम्पूकाव्य है। इसमें पद्यों के साथ ओजोमय गद्य का भी समावेश है। इसकी भाषा जितनी काव्यमय, लालित्यपूर्ण एवं अलंकृत है उतनी ही भावपूर्ण और मर्मस्पर्शी भी। अर्थ-गरिमा एवं संवेदनशीलता से पूर्ण इस कृति पर वाल्मीकि-व्यास जैसे आर्ष कवियों का प्रभाव विशेष रूप से लक्षित होता है। अधिकांश काव्य अनुष्टुप्-छन्द में रचित है। **'कमला-परिणय'**, **'इन्दिरा-प्रियदर्शिनी'** और **'स्वर्गारोहण'** आदि स्थलों पर जहाँ बाण एवं कालिदास का प्रभाव दिखाई देता है वहाँ काव्य भी अधिक कमनीय हो गया है। इस ग्रन्थ में कहीं कहीं अंग्रेजी के सामान्य शब्दों—मोटर, रेल एवं डाक्टर आदि का प्रयोग भी हुआ है। संभवतः इन व्यावहारिक शब्दों के प्रयोग से संस्कृत को लोकप्रिय बनाना कवि का प्रमुख उद्देश्य रहा होगा।

'नेहरूयशःसौरभम्' की भाषा सर्वत्र सुन्दर है। समासों की संक्षिप्तता कवि की विशेषता है। वाक्यों में कहीं भी शैथिल्य नहीं है। इसमें कवि ने त्रिशूलबन्ध आदि बन्धों को भी सचित्र बनाया है।

पौराणिक-स्थल

नेहरू-विषयक संस्कृत-वाङ्मय में पौराणिक संकेत भी पर्याप्त मिलते हैं। कहीं इनका उपमान रूप में प्रयोग किया गया है तो कहीं नेहरू के देवत्व प्रसङ्ग में।

जवाहर-तरंगिणी में तो कवि ने जवाहर के जीवन की तुलना रामायण, महाभारत, भागवत आदि ग्रन्थों से की है। रामायण को उपमान रूप में मानता हुआ कवि कहता है—

सोढश्चिराय खरदूषणसंनिपातः
यद् वा नरोत्तमकुलैर्घटिता सुहृत्ता।
उल्लङ्घितो बहलसंकटवारिधिश्च
रामायणं सुचरिते प्रतिबिम्बितं ते ॥[२]

---

१. श्रीनेहरूचरितम्, १८।६३।

२. जवाहर-तरङ्गिणी श्लोक १८।

अर्थात् तुमने बहुत समय तक खरदूषण अर्थात् कठोर अपशब्दों को सहन किया। तुमने श्रेष्ठ व्यक्तियों से (महान् वानरों से) मित्रता धारण की है, और तुमने अनेक संकटों से युक्त समुद्र अर्थात् अनेक संकट रूपी समुद्र का उल्लंघन किया है। इस प्रकार तुम्हारे शोभन जीवन-चरित्र में रामायण ही प्रतिबिम्बित हो रही है।

रामायण में **'खर'** **'दूषण'** राक्षस हैं एवं नेहरू प्रसंग में **'खर'** कठोर **'दूषण'** गाली अर्थ में है। इसी प्रकार **'यद् वा नरोत्तम'** एवं **'बहुलसंकट-वारिधिः'** आदि शब्द भी द्व्यर्थक हैं।

जवाहर-जीवनम् में तो नेहरू के जीवन की तुलना प्रसंग में कवि ने पौराणिक उपमानों का तांता ही बाँध दिया है। कवि जवाहरलाल की तुलना राम एवं कृष्ण से करता हुआ कहता है कि जिस प्रकार राम पिता दशरथ, माता कौशल्या तथा राज्य को छोड़कर क्लेशवास, भयानक वन में दूर चले गए थे, शस्त्र, अस्त्र तथा शास्त्र की विद्या श्री गुरु वसिष्ठ जी से प्राप्त कर, क्रियात्मक व्यवहार के लिए विश्वामित्र के पास गए थे, जिस प्रकार श्रीकृष्ण माता देवकी व पिता वसुदेव को छोड़ कर नन्द जी के घर यशोदा तपस्विनी के पास गए थे, उसी प्रकार आनन्द भवन को छोड़कर कुमार जवाहर अध्ययन के बहाने इंग्लैण्ड गए—

यथा रामो दशरथं कौशल्यां च नृपालयम्।
हित्वारण्यं गतो दूरं क्लेशवासं भयावहम् ॥
शस्त्रास्त्रशास्त्रसंयुक्तां प्राप्तां विद्यां वसिष्ठतः।
व्यवहारेण विज्ञातुं विश्वामित्रेण संगतः॥
यथा कृष्णः परित्यज्य मातृ-स्नेहं पितुर्मुदम्।
गतस्तदा नन्द-गृहं यशोदां च तपस्विनीम् ॥
तथानन्द-गृहं राज्यं परित्यज्य गतः श्रमम्।
कुर्वन्नध्ययनव्याजं कुमारोऽयं जवाहरः ॥[1]

जवाहर की शिक्षा की तुलना राम एवं कृष्ण से करता हुआ कवि कहता है कि वसिष्ठ तथा विश्वामित्र ने जैसे राम को शिक्षित किया, श्री सन्दीपनि जी ने श्रीकृष्ण को दीक्षा दी, श्री द्रोणाचार्य ने अर्जुन को शस्त्रास्त्र विद्या पढ़ाई, उसी प्रकार हैरो तथा केम्ब्रिज विद्यालयों से श्रीजवाहर

१. जवाहर-जीवनम्, बाल्य-वैभवम्-प्रवृत्तयश्च, श्लोक १२७-१३०।

स्नातक बने—

वशिष्ठ-विश्वामित्राभ्यां शिक्षितो राघवो यथा ।
उज्जयिन्यां सान्दीपिना दीक्षितो यादवो यथा ॥
द्रोणाचार्येण शस्त्रास्त्रैः पाठितः पाण्डवो यथा ।
तथा हैरो-कैम्ब्रिजाभ्यां स्नातकोऽभूज्जवाहरः ॥[1]

रामशरणशास्त्री जवाहर को हरिजनों का उद्धारक मानते हुए उसकी तुलना राम एवं कृष्ण से करते हैं। जैसे राम ने राज्य छोड़कर वन में अहिल्या, शबरी, वानर, निषाद, भील, किरात, कोल तथा पाप-परायण अनेक प्रकार के राक्षसों का कल्याण किया और दीनों के नाथ श्रीकृष्ण ने गोपियों कुब्जा, द्रौपदी, जरासन्ध-पीड़ित नारियों, यज्ञ-पत्नियों, सुदामा, विदुर, गोप, माली तथा अन्य पराश्रितों का एवं हीन जनों का उद्धार किया, उसी प्रकार लोगों में अधिकार-भ्रष्ट, जाति-वर्ण-बहिष्कृत, ग्राम्य-जन तथा हरिजनों का उद्धार जवाहर ने किया—

रामो राज्यं परित्यज्याहल्यां शबरीमतोषयत् ।
वानरान् निषदान् भिल्लान् किरातान् कोलजातिजान् ॥
राक्षसान् विविधाकारान् सदा पाप-परायणान् ।
अभ्युज्जहार सौहार्दात् तथैवायं जवाहरः ॥
गोप्यः कुब्जा द्रौपदी च जरासन्ध-निपीडिताः ।
नार्यः समुद्धृताश्चाथ यज्ञ-पत्न्यः प्रसादिताः ॥
सुदामा विदुरो गोपाः मालाकाराः पराश्रिताः ।
कृष्णेन दीन-नाथेन हीनाः सन्तर्पिता यथा ॥
च्युताधिकारान् लोकेषु जाति-वर्ण-बहिष्कृतान् ।
तथा ग्राम्यान् हरिजनांश्चोज्जहार जवाहरः ॥[2]

'जवाहर-जीवनम्' में अन्य भी अनेक स्थलों पर पौराणिक संकेत प्राप्त होते हैं।

'श्रीनेहरूचरितम्' में भी पौराणिक-स्थल प्राप्त होते हैं। **'श्रीनेहरूचरितम्'** के पंचम सर्ग में कृष्ण एवं योगमाया का उल्लेख हुआ है। उसमें जवाहर की श्रीकृष्ण से समानता दिखाई गई है। अन्तर केवल इतना है कि द्वापर में

---

१. जवाहर-जीवनम्, बाल्यवैभवम् प्रवृत्तयश्च, पृ० २५।
२. वही, पृ० २५-२६।

योगमाया कृष्ण के जन्म से पूर्व उत्पन्न हुई थी, अब वह जवाहर के बाद उत्पन्न हुई है।

श्रीकृष्णजन्मनः पूर्वं योगमाया पुराभवत्।
अधुनानुसमायाता सेयं वीरजवाहरम्॥[1]

इसी प्रकार अन्य भी सभी ग्रन्थों में पौराणिक-स्थलों का पर्याप्त प्रयोग है।

इस प्रकार इन काव्यों में पुराण व प्राचीन इतिहास के समावेश से जहाँ रोचकता उत्पन्न हुई है, वहाँ इनमें वैचारिक गम्भीरता भी आयी है।

---

१. श्रीनेहरूचरितम् ५।२४।

उपसंहार

नेहरू-विषयक समस्त संस्कृत-वाङ्मय का मूल्यांकन करने पर यह सहज ही स्पष्ट हो जाता है कि यद्यपि इन सभी पुस्तकों का उद्देश्य समस्त विश्व के परमप्रिय युगपुरुष पं० जवाहरलाल नेहरू के पुण्य-चरित्र का वर्णन करना है, तथापि इनमें वर्ण्य-विषय की विविधता दृष्टिगोचर होती है। किसी ने उनके विविध गुणों को लेकर प्रशस्ति-ग्रन्थ लिखा है,[1] किसी ने उनके देशभक्ति के पक्ष को ही ग्रन्थ का विशेष विषय बनाया है,[2] किसी ने उनके पारिवारिक इतिहास एवं उनके जन्म से मरणपर्यन्त घटनाओं का काव्यात्मक वर्णन किया है,[3] किसी ने केवल उनकी शव-यात्रा का ही कारुणिक शैली से वर्णन किया है,[4] कहीं उनके जीवन की प्रमुख घटनाओं का ही वर्णन हुआ है तो कहीं उनके द्वारा समय-समय पर प्रदर्शित विचारों को ही संगृहीत कर उनके गीत बना दिए गए हैं।[5] इस वर्ण्य-विषय की विविधता होने पर भी प्रायः सभी ग्रन्थकारों में नेहरू को लोकप्रिय बनाने की होड़ है। प्रायः सभी ग्रन्थ लालित्यपूर्ण, प्रसादगुण युक्त वैदर्भी शैली में लिखे गये हैं। प्रायः सभी कृतियों में तत्कालीन परिस्थितियों का सुन्दर चित्रण है। प्रायः सभी कवियों का छन्द एवं अलंकार आदि के प्रति कोई विशेष आग्रह नहीं है। तथापि इनका सुन्दर प्रयोग इन कृतियों में प्राप्त होता है। इतनी समानता होने पर भी इन कृतियों में पर्याप्त अन्तर है। कई घटनाओं में समानता होने पर भी उनके वर्णन इतने भिन्न हुए हैं कि उनके सत्य होने पर ही सन्देह होने लगता है, यथा—नेहरू जी के जन्म-वर्णन के प्रसंग में **'जवाहर-जीवनम्'** एवं **श्रीनेहरूचरितम्**' में एक किंवदन्ती है कि सन्तानहीन श्री मोतीलाल जी ने श्रद्धा, आस्था एवं भक्ति से एक योगी की सेवा की और उसके प्रसन्न होने पर

---

१. जवाहर-तरङ्गिणी

२. जवाहरलालनेहरूविजयनाटकम्।

३. श्रीनेहरूचरितम्, जवाहरजीवनम्, नेहरूयशःसौरभम् आदि

४. अन्तिम-यात्रा।

५. जवाहर-चिन्तनम्।

उनकी इच्छा फलवती हुई और वह योगी नेहरू-रूप में अवतरित हुआ, किन्तु **'नेहरूयशःसौरभम्'** में उनके जन्म के लिए किए गए प्रयत्न के वर्णन में कवि कहता है कि पुत्र की इच्छा वाले श्री मोतीलाल जी ने हरिद्वार जाकर शरणदायक चण्डी की पूजा की, गंगास्नान किया एवं अन्य तीर्थ स्थलों की यात्रा की, पवित्र मुनियों की पूजा करके मनोभिराम आशीर्वादों को प्राप्त कर वह मनस्वी पत्नी सहित घर आ गया। घर पर उसने यज्ञानुष्ठान किया तत्पश्चात् उसकी मनोरथ सिद्धि हुई।[1]

इन ग्रन्थों की इस घटना में पर्याप्त अन्तर है तथापि इनसे यह अनुमान लगाया जा सकता है कि मोतीलाल जी की सन्तान धार्मिक प्रयत्नों से ही हुई थी।

नेहरू के राजनीति-प्रवेश के विषय में इन ग्रन्थों में भिन्नता है। **'श्रीनेहरूचरितम्'** में नेहरू के विदेश से लौटने पर मोतीलाल जी ने उसके समक्ष भारत की दुर्दशा का वर्णन किया और उसे स्वतन्त्रता संग्राम में भाग लेने के लिए प्रेरित किया, किन्तु **'जवाहरजीवनम्'** में इसके विपरीत मोतीलाल का नेहरू को राजनीति में जाने से रोकने का वर्णन है, और अन्त में नेहरू को लिखना पड़ा—

मोतीलालमसन्तुष्टं दृष्ट्वा भारतमार्तिदम्।
जवाहरोऽलिखत्पत्रं सुतीक्ष्णं जनकं प्रति॥
किमर्थमवरोधो हि क्रियते विदुषात्मना।
भवता भारतीयानां भावानां मोचनात्मनाम्॥[2]

अर्थात् पिता को अपनी भारत-सेवा से अप्रसन्न देख कर जवाहर ने उनको अति कठोर पत्र लिखा। पिता जी! आप विद्वान् होकर भी स्वतन्त्रता चाहने वाले भारतीय भावों का विरोध क्यों करते हैं?

इस प्रकार अनेक अन्य घटनाओं के वर्णन में भी अन्तर है तथा कुछ घटनाओं में परस्पर एकरूपता नहीं है।

'नेहरू-सूत्राणि' में नेहरू जी की वर्षानुक्रमणी में उनके जीवन के प्रत्येक वर्ष की एक प्रमुख घटना दी गई है। **'जवाहर-जीवनम्'** के ग्रन्थ-सार में नेहरू जी के जीवन की प्रमुख घटनाओं का उल्लेख है। इसमें एक वर्ष

---

१. नेहरूयशःसौरभम्, २।१-६।

२. जवाहर-जीवनम्, बाल्यवैभवम् प्रवृत्तयश्च, १४६-४७।

में कई घटनाओं का भी उल्लेख है, जबकि 'नेहरू-सूत्राणि' में प्रत्येक वर्ष की प्रायः एक घटना का उल्लेख होने के कारण कई महत्त्वपूर्ण घटनाएं छूट गई हैं। उधर 'जवाहर-जीवनम्' में भी यद्यपि अधिकांश मुख्य घटनाएं दी गई हैं तथापि उसमें अनेक महत्त्वपूर्ण घटनाओं का उल्लेख नहीं हो पाया है, यथा—'नेहरू-सूत्राणि' में १९२६ में कमला जी की चिकित्सा के लिए स्विट्जरलैण्ड जाने का उल्लेख है किन्तु 'जवाहर-जीवनम्' में इसका कोई संकेत नहीं है। संभवतया यह घटना 'जवाहर-जीवनम्' के रचयिता की दृष्टि में महत्त्वपूर्ण नहीं है।

'जवाहर-जीवनम्' में १९२८ में लखनऊ में 'साइमन-कमीशन' के विरोध में नेहरू के नेतृत्व का वर्णन है किन्तु 'नेहरू-सूत्राणि' में १९२८ की किसी भी घटना का उल्लेख नहीं है। 'नेहरू-सूत्राणि' में १९२९ में नेहरू द्वारा पूर्ण स्वराज्य की उद्घोषणा का उल्लेख है किन्तु 'जवाहर-जीवनम्' में इस महत्त्वपूर्ण घटना को छोड़ दिया गया है। इसी प्रकार उक्त पुस्तक में १९३६ में कमला जी के देहान्त एवं १९३८ में माता स्वरूपा के देहान्त जैसी महत्त्व-पूर्ण घटनाओं को भी छोड़ दिया गया है।

'नेहरूसूत्राणि' में १९४७ में स्वातन्त्र्य प्राप्ति का तो उल्लेख है किन्तु नेहरू जी के प्रधानमन्त्री होने जैसी महत्त्वपूर्ण घटना इसमें छूट गई है।

१९५४ में बनाई गई पंचशील-योजना का 'नेहरू-सूत्राणि' में उल्लेख नहीं हुआ है।

१९५५ में नेहरू को मिली 'भारत-रत्न' की उपाधि का 'जवाहर-जीवनम्' में कोई संकेत नहीं मिलता।

नेहरू ने १९५८ में प्रधानमन्त्री पद-त्याग की इच्छा प्रकट की। इसका भी 'जवाहर-जीवनम्' में कोई संकेत प्राप्त नहीं होता है।

१९६३ के 'भाखड़ा-बाँध' के उद्घाटन का भी 'जवाहर-जीवनम्' में उल्लेख नहीं है।

इस प्रकार हम कह सकते हैं कि घटनाओं की दृष्टि से इन दोनों ग्रन्थों में से किसी एक को दूसरे की अपेक्षा अधिक पूर्ण कहना युक्तिसगत न होगा।

कुछ ग्रन्थों में तथ्य का और कुछ में शैली का दोष है।

'**गान्धिबान्धवम्**' में इन्दिरा जी के बच्चों के प्रसिद्ध नाम कवि के प्रमाद-वश '**राजीव**' एवं '**संजय**' के स्थान पर '**राकेश**' एवं '**राजेश**' दिए गए हैं—

राकेशराजेशमहाभिधानौ धियां निधानौ सुधियां प्रधानौ ।
तवेन्दिरायास्तनयौ प्रभातः, सूर्येन्दुशोभेव भवान् प्रभाति ॥[1]

अर्थात् राकेश और राजेश बड़े श्रेष्ठनाम वाले, बुद्धिमान् तथा बुद्धिमानों में श्रेष्ठ, तुम्हारी इन्दिरा के ये दोनों पुत्र शोभित होते हैं, इस प्रकार सूर्य और चन्द्रमा की शोभा के समान आप प्रकाशित हो रहे हैं।

'**राकेश**' एवं '**राजेश**' ये नाम त्रुटिपूर्ण हैं।

श्री जयराम शास्त्री की रचना '**श्रीजवाहरवसन्तसाम्राज्यम्**' के सदृश कुछ ग्रन्थों की भाषा इतनी क्लिष्ट है कि पाठक भाषा में ही उलझ कर रह जाता है। पाण्डित्य-प्रदर्शन की यह भावना आधुनिक युग के अनुरूप नहीं है।

इन सभी ग्रन्थों में तत्कालीन अन्य सभी स्वतन्त्रता सेनानियों—सुभाष-चन्द्र बोस, राजेन्द्र प्रसाद, पटेल आदि का कोई विशेष वर्णन नहीं है। किसी-किसी कवि ने इनका नामोल्लेख तो किया है किन्तु इन पर विशेष प्रकाश नहीं डाला।

नेहरू जी की सुप्रसिद्ध विनोदप्रियता की भी इस साहित्य में प्रायः उपेक्षा हुई है।

प्रशस्ति-ग्रन्थों में अत्यधिक अतिशयोक्ति है। '**जवाहर-तरंगिणी**' को पढ़ कर स्वयं जवाहरलाल जी ने १८-६-५८ में वर्णेकर जी को पत्र लिखा कि—'लेकिन आपसे एक शिकायत है। आपने जिस तरह मेरी चर्चा की है उससे मुझे लज्जा आई। मैं जानता हूँ कि कविता में बातें बढ़ा कर कही जाती हैं लेकिन वह समय अब नहीं रहा और किसी व्यक्ति की बहुत प्रशंसा करना न उसके लिए और न जनता के लिए अच्छा होता है।'

किन्तु ये दोष अत्यन्त सामान्य हैं।

इस प्रसंग में यह लिखना प्रासंगिक है कि अंग्रेजी एवं हिन्दी के शताधिक ग्रन्थों की तुलना में संस्कृत कृतियों की संख्या अत्यल्प है।

हम उपर्युक्त सम्पूर्ण विवेचन के आधार पर कह सकते हैं कि नेहरू जी पर संस्कृत में जितने भी काव्य लिखे गए उनकी सामग्री रोचक, महत्त्वपूर्ण

---

१. गान्धिबान्धवम्, श्लोक ५४।

एवं आशाप्रद है। इन रचनाओं में से कौन सी रचना श्रेष्ठ है यह कहना कुछ कठिन है। प्रत्येक रचना का अपना सौन्दर्य है, तथापि '**श्रीनेहरू-चरितम्**' एवं '**नेहरूयशःसौरभम्**' संस्कृत में रचित नेहरू-सम्बन्धी वाङ्मय की कान्तिमयी मणियां हैं। हम आशा करते हैं कि संस्कृत के साहित्यकार एवं मनीषियों को स्तर और संख्या दोनों दृष्टियों से ऊपर उठकर उस महापुरुष के चरित्र को जन-गण-मन में प्रतिष्ठित कर देना चाहिए, जिसने भारत-भक्ति से पूर्ण अन्तःकरण से यह कहा था कि जो कोई भी मित्र कहीं भी मेरा स्मरण करें तब उन्हें यह कहना चाहिए कि यह व्यक्ति अन्दर और बाहर से भारत-भूमि में और भारतीय जनों में आसक्त था, और मित्रता से पूर्ण यह उनका अत्यधिक प्रेमपात्र था, और जीवन-पर्यन्त सब प्रकार से सारी भारत-भूमि पर लोगों के द्वारा इसके प्रति असीम प्रेम प्रकट किया गया—

यत् केचिन्मां स्मरेयुः क्वचिदपि सुहृदो भाषितव्यं तदेतै-
रन्तर्बाह्यं जनोऽसौ भरतभुवि तथा भारतीयेषु रक्तः।
प्रीतिस्थानं च तेषां निरतिशयमभूत् सौहृदाबद्धभावं
यावज्जीवं ह्यसीमं सकलभुवि जनैर्लालितः सर्वथा च ॥[1]

१. जवाहर-चिन्तनम्, स्मृतिलेख, पृ०-२७७।

उद्धृत श्लोकों की ससंदर्भ वर्णानुक्रमणी